वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 41
ISBN 978-93-80353-30-2

# रोहिणी नाटक

– रचयित्री –

**परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि**

**श्री ज्ञानमती माताजी**

जम्बूद्वीप रचना रजत जयंती महोत्सव–2010 एवं
शांतिनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं तीर्थंकरत्रय महामस्तकाभिषेक
महोत्सव (11 से 21 फरवरी 2010) के पावन प्रसंग पर प्रकाशित

**-प्रकाशक-**

**दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान**

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.
फोन नं.- (01233) 280184, 292943
**Website : www.jambudweep.org**
**E-mail : ravindrajain@jambudweep.org**

**COURTESY–JAIN BOOK DEPOT**
**C/o Shri Nabhi Kumar Manav Kumar Jain**
C-4, Opp. PVR Plaza, Cannaught Place, New Delhi-1
Ph.-011-23416101-02-03/Website : www.jainbookdepot.com

| द्वितीय संस्करण | वीर नि. सं. 2536 | मूल्य |
|---|---|---|
| 1100 प्रतियाँ | फरवरी 2010 | 20/-रु. |

**दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित**

**वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला**

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएं भी प्रकाशित होती रहती हैं।

*-: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :-*

**परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती मातीजा**

*-: मार्गदर्शन :-*

**प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी**

*-: निर्देशन :-*

**धर्मदिवाकर पीठाधीश क्षुल्लकरत्न श्री मोतीसागर जी महाराज**

*-: सम्पादक :-*

**कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन**

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

प्रथम संस्करण 1981
3300 प्रतियाँ

**कम्पोजिंग-ज्ञानमती नेटवर्क**
**जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.**

# सम्पादकीय

**—कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन**

किसी कवि का कथन है कि–

``The Literature is the mirror of the Society."

अर्थात् साहित्य समाज का दर्पण है। प्रत्येक व्यक्ति गतिशील है और नई-नई खोजों में विश्वास करता है। आज बड़े-बड़े पुराण ग्रन्थों को पढ़ने का, चिन्तन-मनन करने का समय पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित भौतिकवादी युग में किसी के पास नहीं है और कदाचित् समय निकालकर पढ़े भी तो शास्त्र-पुराणों की चीज उनकी समझ से परे हो जाती है और वह धर्म से विमुख होते देखे जाते हैं। ऐसे समय में जनसाधारण को आगमसम्मत जानकारी प्रदान कर उनके जीवन का चहुँमुखी विकास करने हेतु रोचक और सरल भाषा के औपन्यासिक शैली में लिखे गये साहित्य महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

जनसाधारण की इसी रुचि को ध्यान में रखते हुए 275 से भी अधिक ग्रन्थों की लेखिका, राष्ट्रगौरव परम पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने उच्चकोटि के ग्रन्थों के लेखन के साथ-साथ अनेकों लघुकथाएँ, अनेकों लघु उपन्यास, वार्ताएँ एवं रोचक शैली के लघु नाटकों का भी लेखन किया है जिनमें प्राचीन आर्ष ग्रन्थों में वर्णित महापुरुषों के जीवन की संक्षिप्त झाँकी प्रस्तुत की गयी है, जो अत्यन्त हृदयस्पर्शी और प्रेरणास्पद हैं। उसी में से एक कृति यह ''रोहिणी नाटक'' है।

आज के आधुनिक परिवेश में जनसाधारण को धर्म की ओर उन्मुख करने में यह पुस्तक अनूठी कृति साबित होगी और सभी को एक नई दिशा भी प्रदान करेगी। पाठकगण इस पुस्तक को पढ़कर और कलाप्रेमी इनका मंचन कर अपने जीवन को सफल करेंगे और नाटिका को देखने वाले इससे जीवन निर्माणोपयोगी शिक्षा प्राप्त कर अपने जीवन को समुन्नत बनायेंगे, तभी इसकी सार्थकता होगी।



# प्रस्तावना

**—ब्र. कु. इन्दु जैन (संघस्थ)**

मानव जीवन में संस्कारों का विशेष महत्त्व है। उत्तम देश, कुल एवं जाति को प्राप्त करके भी मानव सदाचरण रूप संस्कार जीवन में यदि प्राप्त नहीं करता है तो उसका जीवन पशु के समान निस्सार हो जाता है।

वस्तुतः जीवन में अच्छे संस्कारों को डालने के लिये देव, शास्त्र एवं गुरु ऐसे पुण्यमयी माध्यम हैं जिनसे संस्कारित मनुष्य अपनी उस पर्याय को तो सार्थक करता ही है, आगामी भवों में भी पुण्य के प्रताप से नाना सुखों का उपभोग करते हुए अपनी आत्मा को परमात्मा बनाने में भी सफल हो जाता है।

देव, शास्त्र और गुरु जैसे अनमोल रत्नों में से देव और शास्त्र के महत्त्व को बताने वाले, उनके प्रति अकाट्य श्रद्धा जाग्रत करने वाले गुरुओं का आर्षग्रन्थ में महत्त्वपूर्ण स्थान है। गुरु के लिये कहा गया है कि–

``A Teacher is like a candle, that give light to others by burning itself."

वास्तव में गुरु प्रज्ञारूपी चक्षु प्रदान करने में समर्थ हैं। परम स्तुत्य उन गुरुओं की शृंखला में परम पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी जैन समाज की ऐसी अनमोल निधि हैं जिनके व्यक्तित्व और कृतित्व के सामने समूचा देश नतमस्तक है। चहुँमुखी प्रतिभा की धनी पूज्य गणिनी माताजी के जीवन का प्रत्येक क्षण स्व-पर कल्याण के साथ-साथ जिनधर्म, जिनागम और देव, शास्त्र, गुरु की भक्ति में बीतता है। आगम को अपना प्राण मानने वाली राष्ट्रगौरव माताजी के चरण जिस तीर्थ पर पड़े वह तीर्थ आकाश की ऊँचाइयों को प्राप्त हो गया, जिस भव्य जीव पर उनकी दृष्टि पड़ी वह मानो संसार सागर से ही पार हो गया। आज के युग में पूर्वाचार्यों की प्रतिकृति के रूप में पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी ने अपनी लेखनी से 275 से भी अधिक ग्रन्थों की रचना की है। हिन्दी, संस्कृत, कन्नड आदि भाषाओं की सिद्धहस्त लेखिका पूज्य माताजी ने जहाँ अष्टसहस्री, नियमसार, व्याकरण आदि अनेक उच्चकोटि के ग्रन्थों की हिन्दी टीकाएँ लिखी हैं, अनेकों ग्रन्थों के पद्यानुवाद किये हैं, अनेकों विधानों की रचना कर भक्ति की गंगा प्रवाहित की है, जैनागम के सर्वोच्च सिद्धान्तग्रन्थ षट्खण्डागम की स्वतन्त्र सिद्धान्तचिंतामणि नामक संस्कृत टीका का लेखन

किया है, वहीं बाल-गोपाल, युवा, वृद्ध के सरलतापूर्वक समझने योग्य अनेकों उपन्यासों एवं लघु पुस्तकों का भी लेखन किया है। उसी श्रृंखला में उनके द्वारा समय-समय पर अनेक लघु नाटिकाओं का भी लेखन किया गया जिसमें से हस्तिनापुर से जुड़ी रानी रोहिणी का रोमांचक कथानक नाटिका के रूप में आपके सामने है।

प्रायः देखने में आता है कि नाटक बाल, युवा, वृद्ध सभी के जीवन में संस्कार डालने में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। रामलीला में मर्यादा पुरुषोत्तम राम एवं उनके जीवन से जुड़े प्रत्येक पात्रों का जीवन चरित्र जहाँ लोगों को सद्राह पर चलने की प्रेरणा प्रदान करता है वहीं आज टी.वी. चैनल्स पर आने वाले काल्पनिक धारावाहिक भी जाने-अनजाने व्यक्ति के कोमल मन पर प्रभाव डालते हैं जिनके समाचार प्रायः पत्र-पत्रिकाओं में भी प्रकाशित होते रहते हैं। जैनागम जैसे महासमुद्र में महापुरुषों के जीवन से संबंधित ऐसी सत्य, हृदयस्पर्शी, रोमांचक एवं ग्रहणीय कथाएँ हैं, जिन्हें पढ़कर प्राणी अपने चरित्र निर्माण के साथ-साथ आत्मोत्थान भी कर सकता है। प्रत्येक प्राणी को सद्राह में लगाने वाली पूज्य माताजी ने इन सत्य कथाओं को लघु नाटिकाओं के माध्यम से प्रस्तुत करके जैन जगत पर जो महान उपकार किया है, जैन जगत उनका चिरऋणी रहेगा।

लघु कथानकों की श्रृँखला में से ही यह नाटक 'रोहिणी' है जिसमें हस्तिनापुर के महाराजा अशोक और उनकी रानी के जीवन चरित्र को दर्शाते हुए उनके पूर्व भव का रोमांचकारी वर्णन पूज्य माताजी ने किया है कि किस प्रकार गुरु निन्दा करने का कुफल मनुष्य को भोगना पड़ता है। इस नाटिका को प्रदर्शित करने वाले और इसे देखने वाले महानुभाव इससे सद्प्रेरणा प्राप्त कर देव, शास्त्र व गुरु की भक्ति करते हुए अपनी आत्मा को समुन्नत बनाने में सफल होवें, यही मंगल कामना है।



# ''रोहिणी नाटक'' एक अनूठी कृति

**—धर्मालंकार श्रीमती मालती शास्त्री, दिल्ली**

इस पुस्तक को पढ़कर आप सभी को आश्चर्य होगा कि कैसी वह रानी थी जिसे रोना ही मालूम नहीं था, पर साथ ही साथ आपको समाधान भी मिलेगा कि यह सब रानी रोहिणी के पूर्वजन्मकृत व्रतादि के पुण्य का फल था। वास्तव में जिनधर्म की महिमा अपरम्पार है जितेन्द्रियों का धर्म त्याग और वैराग्य रूप। आज के युग में कुछ ऐसे भी व्यक्ति जो अपने को योगी अथवा भगवान मान बैठे हैं और कहते हैं भोगों को तब तक भोगो जब तक तृप्ति नहीं हो जाती अथवा जहाँ आकुलता हो, ऐसे व्रतादि से धर्मलाभ कुछ भी नहीं है। परन्तु इन सब तथाकथित धर्मधुरन्धरों का कथन मात्र वाक्चातुर्य ही है। विलासियों को ही यह उपदेश रम्य प्रतिभासित हो सकता है धर्मज्ञ को नहीं। वास्तव में आचार्यों ने कहा है 'इच्छानिरोधस्तपः' इच्छाओं को रोकना ही तप है। आशाओं का, भोगों का उदर इतना विशाल है कि इसकी कभी तृप्ति नहीं होती जैसा कि आचार्य गुणभद्र स्वामी ने कहा है–

**आशागर्तः प्रतिप्राणी यस्मिन् विश्वमणूपमम्।**
**कस्य किं कियदायाति वृथैव विषयैषिता।।**

संयम मनुष्य जीवन का आभूषण है और यदि संयम व विवेक को खो दिया जाये तो तिर्यंच और मनुष्य में कोई विशेष अन्तर नहीं रह जायेगा। सम्यग्दर्शन से युक्त जो यम अथवा नियमादि हैं वही 'संयम' इस संज्ञा को प्राप्त होते हैं और इस संयम के आधार से व्यक्ति क्रमानुसार अलौकिक-परमार्थ सुख का भाजन हो जाता है। लेकिन जो तप, त्याग सम्यग्दर्शन से विरहित हैं वे भी महान् फलदायी होते हैं जैसा कि रोहिणी की तपस्या। और उसकी यह तपस्या आगे समीचीनता को प्राप्त कर लेती है जिससे शीघ्र ही वह भवसमुद्र से तिर सकेगी। इसी प्रकार अनंगशरा जिसने बिना सम्यग्दर्शन के 3 हजार वर्ष तक अकामनिर्जरापूर्वक तप किया उसके प्रभाव से वह राजा द्रोणमुख की पुत्री विशल्या हुई, जिसके स्नान के जल से सभी के सब तरह की आदि-व्याधियाँ नष्ट हो जाती थीं और उसके निकट आते ही मरते हुए लक्ष्मण के शरीर से अमोघ शक्ति उस प्रकार भागी थी, जिस प्रकार सूर्योदय होने पर अंधकार पलायमान हो जाता है। जिनागम में कहा गया तप जिसने भी किया वह कभी व्यर्थ नहीं गया। हाँ, यदि

वह जीव भव्य है तो वही व्रत क्रमशः सम्यग्दर्शन को प्राप्त कराने में सहायक हो जायेंगे और यदि सम्यग्दर्शन से युक्त जीव व्रतों की आराधना निदान रहित करते हैं तो मुक्तिलक्ष्मी शीघ्र ही उसकी प्रेयसी बन जाती है।

जब यह रोहिणी नाटक धारावाहिक रूप से 'सम्यग्ज्ञान' मासिक पत्रिका में निकलता था तभी से अब तक कई जगह मंच पर खेला जा चुका है। पुस्तिकारूप में अत्यधिक मांग होने पर यह सर्वप्रथम सन् 1981 में प्रकाशित कराया गया था पुनः इसका द्वितीय संस्करण अब सन् 2010 में आप सभी के हाथ में आ रहा है। इसी के समान परमपूज्य आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी ने कई एक नाटिकाएँ तैयार की हैं, जिनके मंच पर प्रस्तुत होने पर लोग मिथ्यात्व विरहित सत्य को अपनाकर कल्याणकारी मार्ग का अनुसरण कर सकेंगे।



# पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी : एक विराट व्यक्तित्व

**प्रस्तुति-आर्यिका चंदनामती**

अवध प्रान्त की पावन वसुन्धरा ईसवी सन् 1934 को बीसवीं सदी की ब्राह्मी माता पाकर पुनः अपना सौभाग्य सराहने लगी थी, जब शरदपूर्णिमा (आश्विन शु. 15) को जिला बाराबंकी के टिकैतनगर ग्राम में श्रेष्ठी श्री छोटेलाल जी की धर्मपत्नी मोहिनी देवी की पवित्र कुक्षि से एक कन्या का जन्म हुआ था। जिसका नाम रखा गया–मैना।

रात्रि में 9 बजकर 15 मिनट पर मैना का जन्म होते ही प्रसूतिगृह में एक अनोखा प्रकाश फैल गया था। उसी समय दादी माँ के मुँह से निकल पड़ा था कि कन्या के रूप में मेरे घर में लगता है कोई अवतार आया है।

**वैराग्य के अंकुर–**बालिका मैना ने अपनी 12-13 वर्ष की उम्र में ही माँ को दहेज में प्राप्त ''पद्मनंदिपंचविंशतिका'' नामक ग्रंथ का गहराई से स्वाध्याय कर लिया, जिससे उनके मन में वैराग्य के दृढ़ संस्कार समा गये और उन्होंने विवाह बंधन अस्वीकार करने का संकल्प कर लिया। पुनः सन् 1952 में शरदपूर्णिमा के ही दिन बाराबंकी में आचार्य श्री देशभूषण महाराज से सप्तम प्रतिमा रूप आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण कर लिया। सन् 1953 में चैत्र कृष्णा एकम को श्री महावीरजी अतिशय क्षेत्र पर क्षुल्लिका दीक्षा धारण कर ''वीरमती'' नाम प्राप्त किया।

**आर्यिका ज्ञानमती–**19-20वीं शताब्दी के प्रथम आचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागर महाराज के करकमलों से सन् 1956 में वैशाख वदी दूज को माधोराजपुरा (राज.) में आर्यिका दीक्षा लेकर ज्ञानमती नाम प्राप्त किया।

**यथा नाम तथा गुण–**गुरुदेव से प्राप्त नाम के अनुसार ''आर्यिका ज्ञानमती जी'' ने अपने जीवन में ज्ञानक्षेत्र में युग का इतिहास ही परिवर्तित कर दिया है। ढाई हजार वर्ष के इतिहास में किसी भी आर्यिका के द्वारा रचित कोई भी साहित्य नहीं प्राप्त होता है किन्तु पूज्य माताजी ने अष्टसहस्री, नियमसार, जैन भारती, ज्ञानामृत आदि छोटे-बड़े लगभग दो सौ ग्रंथों की रचना करके अनेक आर्यिकाओं को साहित्यसृजन का अवसर प्रदान किया है। इनके द्वारा रचित इन्द्रध्वज, कल्पद्रुम आदि पूजा-विधानों ने तो संसार भर में धूम मचा रखी है।

**जम्बूद्वीप रचना की पावन प्रेरिका–**ऐतिहासिक तीर्थ हस्तिनापुर में इनकी

पावन प्रेरणा से एक विशाल जम्बूद्वीप रचना का निर्माण खुले मैदान में हुआ है। वह ब्रह्माण्ड का ज्ञान कराने वाली भौगोलिक रचना है, जिसे देखने हेतु प्रतिदिन देश-विदेश से हजारों यात्री हस्तिनापुर पहुँचते हैं।

उत्तरप्रदेश सरकार के पर्यटन विभाग ने जम्बूद्वीप से हस्तिनापुर की पहचान बताते हुए उसे एक अतुलनीय 'मानव निर्मित स्वर्ग' की संज्ञा प्रदान की है। यहाँ निर्मित सभी मंदिर अद्वितीय हैं, जिसमें ''तेरहद्वीप की स्वर्णिम रचना''जैनधर्म पर रिसर्च करने वाले विद्यार्थियों, शोधार्थियों एवं वैज्ञानिकों के लिए शोधपरक एवं अन्वेषणात्मक रचना है।

इसके अतिरिक्त शाश्वत तीर्थ अयोध्या, मांगीतुंगी, अहिच्छत्र, प्रयाग, कुण्डलपुर, राजगृही, पावापुरी, काकंदी आदि अनेकानेक तीर्थों का जीर्णोद्धार एवं विकास, जैनधर्म की प्राचीनता को जन-जन तक पहुँचाने के लिए किए गए महान प्रभावनात्मक कार्य जिनेन्द्र भगवान, जिनशासन एवं जिनवाणी के प्रति उनकी अटूट भक्ति एवं समर्पण के ही प्रतीक हैं।

**ज्ञानज्योति का भारत भ्रमण**—4 जून 1982 को राजधानी दिल्ली से एक जम्बूद्वीप का मॉडल सुन्दर रथ के ऊपर सजाकर ज्ञानज्योति रथ का प्रवर्तन पूज्य माताजी की प्रेरणा से प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने किया था। पुनः 1045 दिनों तक भारत भ्रमण के पश्चात् 28 अप्रैल 1985 को तत्कालीन रक्षामंत्री श्री पी.वी. नरसिम्हाराव ने हस्तिनापुर में उसकी अखण्ड स्थापना की जो अद्यावधि संसार को ज्ञान का आलोक प्रदान कर रही है।

**अयोध्या में महामस्तकाभिषेक की प्रेरणास्रोत**—23 अक्टूबर 1992 (धनतेरस) को प्रातःकाल ध्यान करते हुए आपको अयोध्या के भगवान ऋषभदेव का दर्शन हुआ तथा उनका महामस्तकाभिषेक कराने की भावना जागृत हुई। आखिर अन्तर्प्रेरणा से प्राप्त ध्यान की धारणा ने साकार रूप लिया और एक अनहोना कार्य होनी में परिवर्तित हो गया, जिसके फलस्वरूप 11 फरवरी 1993 को पूज्य माताजी ने अपने संघ सहित अयोध्या की ओर पदविहार किया। लगभग सौ गाँवों में अहिंसा धर्म का अलख जगाती हुई ज्ञानमती माताजी का 16 जून 1993 को भगवान ऋषभदेव की जन्मभूमि अयोध्या में मंगल पदार्पण हुआ। 13 फरवरी से 24 फरवरी 1994 तक वहाँ अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भगवान ऋषभदेव का महामस्तकाभिषेक महोत्सव सम्पन्न हुआ।

**मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र की पर्वतीय यात्रा**—महाराष्ट्र प्रांत में स्थित मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र के ट्रस्ट मंडल के बारम्बार आग्रह पर पूज्य माताजी दक्षिण भारत की



लम्बी यात्रा के लिए 27 नवम्बर 1995 को अपने संघ के साथ हस्तिनापुर तीर्थ से मंगल विहार करके उत्तरप्रदेश, दिल्ली, हरियाणा, राजस्थान, मध्यप्रदेश एवं महाराष्ट्र इन छह प्रदेशों में अभूतपूर्व धर्मप्रभावना करके 26 अप्रैल 1996 को मांगीतुंगी पहुँची, वहाँ पूज्य माताजी की प्रेरणा से 'सहस्रकूट कमल मंदिर' का निर्माण हुआ, जिसमें 1008 जिनप्रतिमा विराजमान हुईं। महाराष्ट्र प्रान्त में यह एक अद्वितीय कमल मंदिर का निर्माण हुआ। पूज्य माताजी की प्रबल प्रेरणा से वहाँ का अनेक वर्षों से रुका पंचकल्याणक कार्यक्रम सानंद सम्पन्न हुआ और सन् 1996 का चातुर्मास भी मांगीतुंगी में ही हुआ। उसी मांगीतुंगी तीर्थ पर पूज्य माताजी की प्रेरणा से जिनसंस्कृति की अमिट धरोहर के रूप में ''भगवान ऋषभदेव की 108 फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमा का निर्माणकार्य द्रुतगति से चल रहा है, जो आने वाले समय में जन-जन को जैनधर्म की प्राचीन संस्कृति एवं सर्वोदयी-कल्याणकारी सिद्धान्तों से परिचित करवाएगा।

**भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार**—मांगीतुंगी से विहार करके महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान, मध्यप्रदेश, हरियाणा होते हुए पूज्य माताजी संघ सहित 30 मार्च 1997 को दिल्ली पहुँची। सन् 1997 का चातुर्मास दिल्ली में हुआ। चातुर्मास के मध्य 4 अक्टूबर से 13 अक्टूबर तक ''चौबीस कल्पद्रुम महामण्डल विधान'' हुआ, जिसमें भगवान ऋषभदेव से भगवान महावीर तक के चौबीस समवसरणों की रचना, विश्व में अद्वितीय, प्रथम बार हुई। भारत के इतिहास में यह ''जैन महाकुंभ मेला' ही था, जिसमें हजारों लोगों ने भाग लिया और प्रतिदिन लाखों लोग देखने आये।

पुनः 22 मार्च 1998 को ऋषभजयंती के दिन राजधानी दिल्ली के लालकिला मैदान से पूज्य गणिनी ज्ञानमती माताजी की पावन प्रेरणा एवं मंगल आशीर्वाद से भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार का उद्घाटन हुआ और 9 अप्रैल 1998 को महावीर जयंती के दिन माननीय प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी के करकमलों से भारत भ्रमण हेतु समवसरण रथ का प्रवर्तन हुआ। इस समवसरण के प्रभाव से नगर-नगर में अहिंसा, सुख, शांति, समृद्धि एवं मैत्री की स्थापना हुई है। इसी शृँखला में भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) से सन् 2003 में ''भगवान महावीर ज्योति'' का विविध प्रान्तों में सफल प्रवर्तन भी इसी शृँखला की विशिष्ट कड़ी है।

जैनधर्म की प्राचीनता तथा 24 तीर्थंकर भगवन्तों के नाम एवं सिद्धान्तों को जन-जन तक पहुँचाने के लिए पूज्य माताजी ने समय-समय पर अनेक वृहत्

विधानों, महामहोत्सवों, सेमिनारों का आयोजन करवाया। जैन टी.वी., जी.टी.वी., आस्था चैनल आदि के माध्यम से लम्बे समय तक प्रवचन करके जैन-जैनेतर सभी को जैनधर्म के मौलिक सिद्धान्तों से अवगत कराया। इसके अतिरिक्त कितने ही अन्य धर्मप्रभावना के कार्य पूज्य माताजी ने सम्पन्न किए हैं, जिनका यहाँ लेखन तो संभव नहीं है किन्तु आज पूरा समाज उनके कार्य-कलापों से परिचित होकर उन्हें कर्मठता की मूर्ति के रूप में पहचानता है।

आयोजनों के क्रम में ही 23वें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ का जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव तीन वर्ष तक नाना आयोजनों के माध्यम से मनाया गया, जिसमें उनकी जन्मभूमि वाराणसी, केवलज्ञान भूमि अहिच्छत्र एवं निर्वाणभूमि सम्मेदशिखरजी के प्रति जैन समाज को तन-मन-धन से समर्पित होने की प्रेरणा प्राप्त हुई। इस मध्य पूज्य माताजी ने सन् 2006 में अपनी आर्यिका दीक्षा के 50 वर्ष पूर्ण किए और भारत की सम्पूर्ण जैन समाज ने उनका ''आर्यिका दीक्षा स्वर्ण जयंती महोत्सव'' मनाकर इस अतिशयकारी प्राचीन प्रतिमा सदृश गौरवशाली साध्वी को अपनी विनम्र विनयांजलि अर्पित की। पुनः सन् 2008 में शरदपूर्णिमा की पावन तिथि में इनके 75वें जन्मदिवस पर राष्ट्रीय स्तर पर इनका हीरक जयंती महोत्सव मनाया गया।

समय-समय पर माताजी की प्रेरणा से आयोजित अनेक कार्यक्रमों में अनेक राजनेता, प्रधानमंत्री, राष्ट्रपति, प्रशासनिक अधिकारी इत्यादि ने पधारकर माताजी का आशीर्वाद प्राप्त किया है, उस क्रम में 21 दिसम्बर 2008 को जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में पूज्य माताजी की प्रेरणा से आयोजित विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन का उद्घाटन भारत की प्रथम महिला राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवीसिंह पाटील के करकमलों से हुआ और ''शांति वर्ष'' के रूप में घोषित वर्ष-2009 में विश्वशांति हेतु अनेक अनुष्ठान आयोजित किए गए।

वस्तुतः उनके जीवन का प्रत्येक क्षण इतिहास का एक स्वर्णिम पन्ना है, उनके बारे में कुछ भी कहना सूर्य को दीप दिखाने के सदृश ही है अतः अपने जीवन में ऐसे महान कार्यों की जन्मदात्री, दिव्य शक्तिधारिणी, परम तपस्विनी, चारित्रचन्द्रिका माताजी के चरणों में शत-शत नमन के साथ उनके दीर्घ एवं स्वस्थ जीवन हेतु मंगलकामना है।



# दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान-संक्षिप्त परिचय

**-पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर**

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान की स्थापना पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से सन् 1972 में राजधानी दिल्ली में हुई थी। संस्थान का मुख्य कार्यालय सन् 1974 में हस्तिनापुर में प्रारंभ हुआ। इस संस्थान के अन्तर्गत अनेक गतिविधियाँ हस्तिनापुर में तथा अन्यत्र चल रही हैं-

1. सन् 1972 से वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला के अन्तर्गत लाखों ग्रंथ प्रकाशित हो रहे हैं।

2. सन् 1974 से इस संस्थान के मुखपत्र के रूप में 'सम्यग्ज्ञान' हिन्दी मासिक पत्रिका का निरंतर प्रकाशन हो रहा है।

3. सन् 1974 से 1985 तक हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप रचना का निर्माण कार्य हुआ।

4. सन् 1974 से अब तक जम्बूद्वीप रचना के अतिरिक्त अनेक जिनमंदिरों का निर्माण हुआ है-कमल मंदिर, तीन मूर्ति मंदिर, ध्यान मंदिर, शांतिनाथ मंदिर, वासुपूज्य मंदिर, ॐ मंदिर, सहस्रकूट मंदिर, विद्यमान बीस तीर्थंकर मंदिर, आदिनाथ मंदिर, अष्टापद मंदिर, ऋषभदेव कीर्तिस्तंभ, स्वर्णिम तेरहद्वीप रचना एवं नवग्रहशांति जिनमंदिर।

5. जम्बूद्वीप पुस्तकालय जिसमें लगभग 15000 ग्रंथ संग्रहीत हैं।

6. णमोकार महामंत्र बैंक जिसमें भक्तों द्वारा लिखकर भेजे गये करोड़ों णमोकार मंत्र जमा किये जाते हैं।

7. समय-समय पर शिक्षण-प्रशिक्षण शिविरों तथा संगोष्ठियों के आयोजन किये जाते हैं।

8. यात्रियों के शुद्ध भोजन के लिए राजा श्रेयांस भोजनालय का संचालन।

9. यात्रियों के ठहरने के लिए आधुनिक सुविधायुक्त डीलक्स फ्लैट्स वाली कई धर्मशालाओं तथा कोठियों एवं बंगलों का निर्माण किया गया है।

10. जम्बूद्वीप परिक्रमा के लिए नौका विहार, ऐरावत हाथी तथा मनोरंजन हेतु मिनी ट्रेन, झूले आदि हैं।

11. ज्ञानमती कला मंदिरम् में हस्तिनापुर के प्राचीन इतिहास से संबंधित झाँकियाँ हैं।

12. तीर्थंकर जन्मभूमियों की वंदना एवं धार्मिक फिल्मों का प्रदर्शन करने वाले थियेटर से समन्वित हीरक जयंती एक्सप्रेस।

दिल्ली, मेरठ, मुजफ्फरनगर, हरिद्वार, झाँसी, तिजारा आदि से जम्बूद्वीप स्थल तक आने के लिए दिन भर बसें मिलती रहती हैं।

दि. जैन त्रिलोक शोध संस्थान के अन्तर्गत भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार में भव्य नंद्यावर्त महल तीर्थ तथा प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में निर्मित तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ का भी संचालन होता है।

जम्बूद्वीप एवं अन्य रचनाओं के दर्शन हेतु हस्तिनापुर पधारकर आध्यात्मिक एवं शारीरिक सुख की प्राप्ति करें।



# वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के सहयोगी

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान के अन्तर्गत ''वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला'' की स्थापना सन् 1972 में हुई। तब से अब तक लाखों की संख्या में ग्रन्थों का प्रकाशन हो चुका है और निरन्तर हो रहा है। ग्रंथमाला से पाठकों को ग्रन्थ कम कीमत में प्राप्त हो सकें, इस दृष्टि से ग्रन्थमाला में एक संरक्षक योजना अगस्त सन् 1990 से प्रारंभ की गई है। इस योजना के अन्तर्गत निम्न महानुभाव अब तक संरक्षक बनकर अपना सहयोग प्रदान कर चुके हैं।

## शिरोमणि संरक्षक

1. **श्रीमती निर्मला जैन ध.प. स्व. श्री प्रेमचन्द्र जैन, तत्पुत्र प्रदीप कुमार जैन, खारी बावली, दिल्ली-6।**
2. **श्रीमती सुमन जैन ध.प. श्री दिग्विजय सिंह जैन, इंदौर।**
3. **श्री महावीर प्रसाद जैन संघपति, जी-19, साऊथ एक्सटेन्शन, नई दिल्ली।**
4. **श्री महेन्द्र पाल हरेन्द्र कुमार जैन, सूरजमल विहार, दिल्ली।**
5. **श्रीमती मोहनी जैन ध.प. श्री सुनील जैन, प्रीत विहार, दिल्ली।**
6. **श्री देवेन्द्र कुमार जैन (धारूहेड़ा वाले) गुड़गाँव (हरि.)।**
7. **श्रीमती शारदा रानी जैन ध.प. स्व. रिखबचंद जैन, बाहुबली एन्क्लेव, दिल्ली-92।**
8. **डॉ. देवेन्द्र कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)**
9. **श्रीमती संगीता जैन ध.प. श्री संजीव कुमार जैन, शेरकोट (बिजनौर) उ.प्र.**
10. **श्री अनिल कुमार जैन, दरियागंज, दिल्ली**
11. **श्री बी.डी. मदनाइक, मुम्बई**
12. **श्री धनकुमार जैन, बाहुबली एन्क्लेव, दिल्ली-92।**
13. **श्री जितेन्द्र कुमार जैन एवं श्रीमती सुनीता जैन कोटड़िया, फ्लोरिडा, यू.एस.ए.**
14. **श्रीमती विमला देवी जैन ध.प. श्री ओमप्रकाश जैन, स्वालिक नगर, हरिद्वार (उत्तराखंड)।**
15. **श्री अमित जैन एवं संभव जैन सुपुत्र श्रीमती अनीता जैन ध.प. श्री मूलचंद जैन पाटनी, दिसपुर (कामरूप) आसाम।**
16. **श्रीमती अजित कुमारी जैन ध.प. श्री महेन्द्र कुमार जैन, ओबेदुल्लागंज (रायसेन) म.प्र.।**
17. **श्री नाभिकुमार जैन, जैन बुक डिपो, सी-4, पी.वी.आर. प्लाजा के पीछे, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली।**

## परम संरक्षक

1. श्री माँगीलाल बाबूलाल पहाड़े, हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश)।
2. डॉ. प्रकाशचन्द्र जैन, 792 विवेकानंदपुरी, सिविल लाइन, सीतापुर (उ.प्र.)।
3. श्री सुमत प्रकाश जैन, गज्जू कटरा, शाहदरा, दिल्ली।
4. श्री सुनील कुमार जैन, द्वारा-सुनील टैक्सटाईल्स, सरधना (मेरठ) उ.प्र.।
5. श्री प्रकाश चंद अमोलक चंद जैन सर्राफ, सनावद (म.प्र.)।
6. श्री प्रद्युम्न कुमार जवेरी, रोकड़ियालेन, बोरीवली (वेस्ट) मुंबई।
7. श्रीमती उर्मिला देवी ध.प. श्री कान्ती प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।
8. श्रीमती उषा जैन ध.प. श्री विमल प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।
9. श्री आनन्द प्रकाश जैन (सौरम वाले) , गांधीनगर, दिल्ली।
10. श्रीमती सरिता जैन ध.प. श्री राजकुमार जैन, किदवई नगर, कानपुर।
11. स्व. श्रीमती कैलाशवती ध.प. श्री कैलाश चन्द्र जैन , तोपखाना बाजार, मेरठ।
12. श्री भानेन्द्र कुमार जैन, द्वारा-श्री विद्या जैन, भगत सिंह मार्ग, जयपुर।
13. श्री प्रदीप कुमार शान्तिलाल बिलाला, अनूपनगर, इंदौर, (म.प्र.)।
14. श्री सुरेशचंद पवन कुमार जैन, बाराबंकी (उ.प्र.)।
15. श्री नथमल पारसमल जैन, कलकत्ता-7।
16. श्रीमती स्व. शांताबाई ध.प. श्री कमलचंद जैन, सनावद (म.प्र.)।
17. श्री रूपचंद जैन कटारिया, दिल्ली
18. श्री आशु जैन, कालका जी, नई दिल्ली



## चौबीस तीर्थंकरों की सोलह जन्मभूमियों की नामावली

*महानुभावों,*

*अपने नगर के जिनमंदिरों में चौबीस तीर्थंकरों की सोलह जन्मभूमियों के नाम निम्नानुसार लिखवाएं एवं इन तीर्थों की यात्रा करके पुण्यलाभ प्राप्त करें।*

| | |
|---|---|
| 1. अयोध्या (फैजाबाद-उ.प्र.) | –श्री ऋषभदेव भगवान |
| | –श्री अजितनाथ भगवान |
| | –श्री अभिनंदननाथ भगवान |
| | –श्री सुमतिनाथ भगवान |
| | –श्री अनंतनाथ भगवान |
| 2. श्रावस्ती (बहराइच-उ.प्र.) | –श्री संभवनाथ भगवान |
| 3. कौशाम्बी (उ.प्र.) | –श्री पद्मप्रभु भगवान |
| 4. वाराणसी (उ.प्र.) | –श्री सुपार्श्वनाथ भगवान |
| | –श्री पार्श्वनाथ भगवान |
| 5. चन्द्रपुरी (वाराणसी) उ.प्र. | –श्री चन्द्रप्रभु भगवान |
| 6. काकन्दी (देवरिया नि.-गोरखपुर) उ.प्र. | –श्री पुष्पदंतनाथ भगवान |
| 7. भद्रिकापुरी | –श्री शीतलनाथ भगवान |
| 8. सिंहपुरी (सारनाथ) उ.प्र. | –श्री श्रेयांसनाथ भगवान |
| 9. चम्पापुरी (भागलपुर-बिहार) | –श्री वासुपूज्यनाथ भगवान |
| 10. कम्पिलपुरी (फर्रूक्खाबाद-उ.प्र.) | –श्री विमलनाथ भगवान |
| 11. रत्नपुरी (फैजाबाद-उ.प्र.) | –श्री धर्मनाथ भगवान |
| 12. हस्तिनापुर (मेरठ-उ.प्र.) | –श्री शांतिनाथ भगवान |
| | –श्री कुन्थुनाथ भगवान |
| | –श्री अरनाथ भगवान |
| 13. मिथिलापुरी | –श्री मल्लिनाथ भगवान |
| | –श्री नमिनाथ भगवान |
| 14. राजगृही (नालंदा-बिहार) | –श्री मुनिसुव्रतनाथ भगवान |
| 15. शौरीपुर (बटेश्वर-उ.प्र.) | –श्री नेमिनाथ भगवान |
| 16. कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) | –श्री महावीर भगवान |

*–निवेदक –*

**अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थंकर जन्मभूमि विकास कमेटी**

*प्रधान कार्यालय* –**जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.**, फोन नं.-01233-280184, 280236

# रोहिणी (नाटक)

## नांदीमंगल

त्रिभुवनतिलक! त्रिभुवनमहित! त्रिभुवन शिखर पर राजते।
प्रभु आप अनुपम ज्योति से, त्रिभुवननिकेत प्रकाशते।।
अब आइये जिनदेव! मेरे, मनकमल में राजिए।
परिपूर्ण परमानंद सुखमय, शांतिरस में साजिए।।

*पुष्पांजलिः*

## प्रस्तावना

**सूत्रधार**—अहा! हा! आज मुझे विदित हुआ कि सच्चा सुख, उपमारहित अलौकिक सुख कहाँ है ? मैं समझ गया, समझ गया।

(आनंद में विभोर हो झूमने लगता है तभी नर्तकी प्रवेश करती है।)

**नर्तकी**—महानुभाव! सभा में उपस्थित हुए दर्शकगण आपके अभिनय की प्रशंसा सुनकर आते ही चले जा रहे हैं। देखिए ना, सामने दृष्टि डालिए।

**सूत्रधार**—(आश्चर्य से) ओहो! तो क्या मुझे अभी कोई दृश्य उपस्थित करना है!

**नर्तकी**—हाँ, हाँ, अतिशीघ्र ही! और ऐसा अद्भुत दृश्य दिखाइये कि जनता अपने आपको भी भूल जाये।

**सूत्रधार**—ठीक, (कुछ सोचकर) हाँ, मैंने दर्शकों को बहुत बार श्रृंगार रस में डुबकी लगवायी है तथा कभी-कभी उन्हें वीर रस में भी खूब ही उत्तेजित किया है अतः ये कुछ नाटक अद्भुत तो नहीं रहेंगे। (पुनः सोचने की मुद्रा बनाकर) हाँ हाँ, याद आ गया, आ गया। (खुशी से उछल पड़ता है।)

**नर्तकी**—आर्य! आप अकेले-अकेले आनंद लूट रहे हैं, भला मुझे भी तो बतलाइये कि आप आज क्या दृश्य दिखाने वाले हैं ?



**सूत्रधार**—हाँ, क्यों नहीं, भला तुम्हें कैसे नहीं बतलाऊँगा! अच्छा तो बड़ी सावधानी से सुनो!

**नर्तकी**—सुनाइए!

**सूत्रधार**—हस्तिनापुर के महाराजा अशोक और महारानी रोहिणी जी का अभिनय दिखाऊँगा।

**नर्तकी**—उसमें कौन-कौन से रस भरे हुए हैं ?

**सूत्रधार**—उसमें नवों रस भरे हुए हैं। श्रृंगार रस, वीर रस, करुण रस, हास्य रस, अद्भुत रस, भयानक रस, रौद्र रस और वीभत्स रस ये तो हैं ही हैं किन्तु अंत में शांत रस ने सबको जलांजलि देकर अपना एकमात्र साम्राज्य फैला दिया है। अतः इस नाटक में तो वही प्रधान है।

**नर्तकी**—(मुख विवर्ण करके) अरे! श्रृंगार रस की प्रधानता से तो सभी लोग अंत में प्रिय मिलन को देखकर विभोर हो उठते हैं और... इसमें अंतिम फल क्या होगा ?

**सूत्रधार**—अरी मुग्धे! तूने समझा ही नहीं, इस शांतरस की प्रधानता में तो अंतिम फल सबसे ही उत्तम प्रिय वस्तु का—सबसे ही श्रेष्ठ परम सौख्य को देने वाली मुक्तिवल्लभा का मिलन होगा, समझी।

**नर्तकी**—हूँ, तो क्या वह अशरीरी मुक्तिकन्या कुछ आनंद भी दे सकेगी ? क्या मोक्षमहल में चलचित्र, टेलीविजन, रेडियो आदि मनोरंजन के साधन मिलेंगे ? क्या वहाँ पर मनोहर गीत गाने वाली, मन को हरण करने वाली रमणियाँ मन को रमाएंगी ? वहाँ तो शायद कुछ भी सामग्री नहीं है।

**सूत्रधार**—नहीं, नहीं! वहाँ तो इन तुच्छ कुछ क्षणमात्र सुख देने वाली वस्तुओं से भी बढ़कर अनुपम अनंत गुणरत्न भरे हुए हैं। वहाँ का सुख... ओहो! क्या कहना, तीनों लोकों के सुखों से विलक्षण अपूर्व सुख है! अरी मुग्धे! यदि किसी को वह सुख एक क्षण को भी मिल जाय तो वह फिर उस सुख को सदा-सदा काल तक छोड़ेगा ही नहीं और वापस कभी भी यहाँ पर आयेगा ही नहीं।

**नर्तकी**—(आश्चर्य से) तो क्या वह अंगूरों की मिठास से भी अधिक मीठा है?

**सूत्रधार**—हाँ, हाँ सुन! चक्रवर्ती सम्राट्, जो कि छह खण्ड पृथ्वी का उपभोग करते हैं जिनके छियानवे हजार रानियाँ होती हैं और जिनका वैभव समुद्र के समान अपार होता है, उन्हें तुम जानती हो ?

**नर्तकी**—क्यों नहीं, अवश्य जानती हूँ।

**सूत्रधार**—देखो! उन चक्रवर्तियों के सुख से भोगभूमिया जीवों का सुख

अनंतगुणा अधिक होता है।

**नर्तकी**—(आश्चर्य से) अनंतगुणा!

**सूत्रधार**—हाँ, हाँ, अनंतगुणा! और भी सुनते जाइये। इन भोगभूमियों से धरणेन्द्र का सुख अनंतगुणा है, इन धरणेन्द्र से देवेन्द्र का सुख अनंतगुणा है, उस देवेन्द्र सेभी अहमिन्द्र का सुख अनंतगुणा है, इन सभी के अनंतानंत गुणित अतीतकाल केसुखों को एकत्रित कीजिए पुनः इन सभी के ही भविष्यकाल के सम्पूर्ण अनंतानंत गुणित सुखों को इकट्ठा कीजिए तथा पुनरपि इन सभी के अनंतानंत गुणित वर्तमान कालसंबंधीसुखों को भी एकत्रित कीजिए और सबको मिला दीजिए। तीन लोक से भी अधिक ढेरके समान सम्पूर्ण सुखों की अपेक्षा भी अनंतानंत गुणा अधिक सुख सिद्ध भगवान को क्षणक्षण में उस मुक्तिकान्ता के समागम से प्राप्त होता है।

**नर्तकी**—(हर्ष से नाचकर) ओहो! तब तो इसी एक सुख के लिए ही हम सबको प्रयत्न करना चाहिए।

**सूत्रधार**—जरूर, जरूर! इसीलिए तो मैंने यह शांतरस प्रधान अभिनय दिखाना चाहा है।

**नर्तकी**—तो फिर अब आप देरी न कीजिए! जनता भी देखने के लिए अब अतीव उत्सुक हो रही है।

**सूत्रधार**—बस ठीक है, अब आप भी श्री ऋषभदेव की भक्ति में विभोर हो अपनी नृत्यकला का प्रदर्शन कीजिए।

(नर्तकी नृत्य करने लगती है। पुनः दोनों ही निकल जाते हैं।)

*(पटाक्षेप)*

## प्रथम स्तम्भ

(सौराष्ट्र देश के गिरिनगर के राजा भूपाल अपनी रानी और राजश्रेष्ठी वैश्यपति गंगदत्त के साथ अनेक परिकर से सहित बसंतोत्सव के लिए बगीचे की तरफ प्रस्थान कर रहे हैं। साथ में गंगदत्त की पत्नी सिंधुमती भी है। वह यौवन से उन्मत्त है और अपने रूप का अधिक गर्व करने वाली है। अकस्मात् मुनि को देखकर सेठजी अपनी भार्या को आहारदान हेतु वापस कर देते हैं, वह क्रोध में आकर मुनि को कड़वी तूमड़ी का आहार देकर उन्हें परलोक भेज देती है। राजा वापस आकर सारी स्थिति जानकर सिंधुमती को दण्डित करते हैं और वह मरकर दुर्गति को प्राप्त कर लेती है। अनंतर पूतिगंधा होकर अत्यंत दुःख से पीड़ित हुई गुरु के उपदेश से रोहिणी व्रत करती है।)



## प्रथम दृश्य

**समय**—मध्यान्ह

**स्थान**—शहर का मध्य भाग

| | |
|---|---|
| 1. सूत्रधार | |
| 2. नर्तकी | |
| 3. भूपाल | गिरिनगर के नरेश |
| 4. रानी | गिरिनगर के नरेश |
| 5. मंत्री गिरिनगर के नरेश | |
| 6. गंगदत्त | राजश्रेष्ठी |
| 7. सिंधुमती | सेठानी |
| 8. यमुना | धाय |
| 9. सैनिकगण | |
| 10. नागरिकगण | |
| 11. प्रतिहारी | रानी की दासी |
| 12. पुरुष | लकड़हारा |
| 13. स्मृति | कन्या |
| 14. ईहा | कन्या |

(महल के बाहर सेठ गंगदत्त अपनी भार्या सिंधुमती से वार्तालाप करते हुए चल रहे हैं। महाराजा साहब की सवारी आगे बढ़ चुकी है, सब सैनिक लोग आगे बढ़ते जा रहे हैं।)

**गंगदत्त**—प्रिये! महाराज की सवारी आगे बढ़ गई है वे मेरी प्रतीक्षा में काफी देर तक रथ को यहीं रोके रहे थे। किन्तु आप तो अपनी सजावट के आगे कुछ परवाह ही नहीं करती हो।

**सिंधुमती**—प्रियतम! देखो! अब मैं कितनी सुंदर दिख रही हूँ। सचमुच में, मेरा रूप अनूप है। क्या मेरे जैसा रूप किसी अन्य महिला का है ? क्या मेरे जैसा शृंगार कोई अन्य महिला कर सकती है ?.....अहा हा! क्या यौवन की बहार है। इस छलकते हुए यौवन के उन्माद में बसंत की शोभा भी तो अपार है।

**गंगदत्त**—अब जल्दी करो, देरी न करो, महाराज साहब बहुत आगे निकल जाएंगे।

**सिंधुमती**—प्रियतम! क्या मेरे सौभाग्य की उपमा यहाँ की रानी को मिल सकती है ?... ऐं! यह देखो, मेरा मनमोहक रूप! (अपने आप ही खुशी से झूमउठती है।)

**गंगदत्त—**प्रिय! अपना वैभव भी क्या राजा से कम है ? और आपका रूप-सौन्दर्य भी क्या महारानी जी से कम है ? और इसीलिए तो मैं अपने को बहुत भाग्यशाली समझता हूँ।

**सिंधुमती—**(उन्मत्त सदृश चलती हुई) इस शहर में तो क्या इस धरा पर ही मुझे तो अपने जैसी सुंदर कोई भी स्त्री नहीं दिख रही है।

**गंगदत्त—**(सहसा) देखो, देखो! वे महामुनी समाधिगुप्त, ओहो! कैसे निस्पृहमना, अकिंचन वेष को धारण करने वाले!

**सिंधुमती—**कौन ? कहाँ, कहो ?

**गंगदत्त—**(अंगुली के इशारे से) वो देखो प्रिये! वे तो अपने घर की तरफ ही तो जा रहे हैं। हाँ... आहार की बेला है। ठीक है! इसीलिए ये महामना बस्ती में आये हैं, नहीं तो ये वन में ही ध्यान लगाने वाले ऋषिराज हैं। प्रिये! जावो! तुम बहुत ही जल्दी वापस जावो! इन महातपस्वी को आहारदान देकर वापस आ जाना।

**सिंधुमती—**(चौंककर) ऐं... मैं जाऊँ ? क्या आप मुझे इस बसंतोत्सव से वापस कर देंगे ? (कटाक्ष से देखती है)

**गंगदत्त—**नहीं नहीं, देवि! मेरा अभिप्राय ऐसा नहीं है किन्तु अपने घर की तरफ जाते हुए इन मुनिराज को आहार तो कराना ही है। यह तो महान पात्र का लाभ बड़े भाग्य से ही मिला है।

**सिंधुमती—**मैं बिना वनक्रीड़ा के वापस कैसे..... ?

**गंगदत्त—**तुम जल्दी जावो! आहारदान का लाभ लेवो। हाँ, देखो! मुझे तो महाराज साहब की आज्ञा में उनके साथ जाना ही है।

(सिंधुमती पति की आज्ञा से अपनी धाय के साथ वापस लौटते हुए मार्ग में वार्तालाप कर रही है।)

**सिंधुमती—**देख यमुना! यह कौन सा दुष्टात्मा बीच में ही आ गया कि जिसने मेरे भोगों में, मेरी वनक्रीड़ा में विघ्न डाल दिया। (दीर्घ निःश्वास लेकर) ओह! सखी! मेरे तो पैर जड़ हो रहे हैं, मुझे तो इतना गुस्सा आ रहा है कि इस दुष्ट साधु को अभी ही समाप्त कर दूँ।

(क्रोध में कांपने लगती है)

**यमुना—**अरे रे रे! (कान में हाथ लगाकर) सेठानी जी! आप यह क्या बोल रही हैं ? हाय, हाय! ये बेचारे निरपराधी महात्मा! हमेशा जंगल में रहने वाले, ओह! आप इन्हें बड़े प्रेम से पड़गाहें और नवधा भक्ति से आहार देवें। आपका मनुष्य जन्म सफल हो जावेगा।



**सिंधुमती—**अरी रांड! तू भी क्या शिक्षा दे रही है ? मालूम होता है कि तू इन्हीं की ही दासी है। बस! बस! देख, न होगा बाँस न बजेगी बाँसुरी।

(जल्दी-जल्दी चली जाती है)

(कुछ देर बाद महाराजा की सवारी वापस आ रही है और इधर से विमान में महामुनि को बिठाकर तमाम लोग उसे कंधे पर लेकर बारह भावना का पाठ बोलते हुए आ रहे हैं। बीच में महाराज स्वयं सामने आकर पूछते हैं)

**भूपाल—**अरे, अरे! यह किनका विमान है ? मंत्री! जल्दी बताओ।

**मंत्री—**(आगे बढ़कर) महाराजाधिराज! मैं अभी सारा निर्णय किये लाता हूँ। अरे प्रतिहारी! देख तो भला यह कैसा दृश्य है ?

**प्रतिहारी—**हाँ मालिक! मैं अभी आई! (किसी से कुछ बात कर पुनः मंत्री के पास आकर) मंत्री महोदय! गजब हो गया।

**मंत्री—**(आश्चर्य से) ऐं, क्या हो गया ? जल्दी बोल!

**प्रतिहारी—**महात्मा...जी को मार डा...ला।

**मंत्री—**अरे! किसने ?

**प्रतिहारी—**ग... ग-गंगदत्त की भा-भार्या ने।

**मंत्री—**अरे! जो राजश्रेष्ठी गंगदत्त है, उन्हीं की भार्या ने ?

**प्रतिहारी—**हाँ-हाँ! उन्हीं की भार्या ने।

**मंत्री—**क्यों ? कैसे मार डाला ?

(महाराज स्वयं आगे बढ़ते हैं)

**महाराज—**हाँ, क्या बात है प्रतिहारी ? जल्दी से स्पष्ट बता।

**प्रतिहारी—**(हाथ जोड़कर) अन्नदाता! आ... आ... आ...प के से... सेठ की भा... भार्या ने।

**महाराज—**तू इतनी घबरा क्यों रही है, ठीक से बता।

(बीच में एक सैनिक आकर बोलता है)

**सैनिक—**महाराजा साहब! मैं सही हकीकत आपको समझाये देता हूँ। पृथ्वीनाथ! अभी चार घण्टे पहले वनविहार के प्रस्थान के समय आपके सेठ गंगदत्त जी भी अपनी भार्या के साथ चल रहे थे। उन्होंने मार्ग से ही अपने महल की तरफ जाते हुए मासोपवासी श्री समाधिगुप्त नामक महामुनि को देखा। आपको मालूम ही है कि ये सेठ जी बड़े धर्मात्मा हैं अतः उन्होंने अपनी सेठानी जी को आहारदान हेतु वापस भेज दिया। वन विहार से वापस जाने में सेठानी जी को बहुत गुस्सा आ गया चूँकि वे मिथ्यादृष्टि हैं अतः उन्होंने घर जाकर

मुनिराज का पड़गाहन करके उन्हें कड़ुवी तूमड़ी का आहार दे दिया। मुनिराज ने समताभाव से वह आहार ग्रहण कर लिया और मंदिर जी में आकर श्रीजी के सामने चतुराहार का त्याग करके परमसमाधि ग्रहण कर ली। उसी क्षण श्रावकगण दौड़ पड़े, मुनिराज तो महाप्रयाण कर गये। उनके इस पार्थिव शरीर को विमान में स्थापित कर ये लोग महोत्सव के साथ नशियाँ जी के बगीचे में ले जा रहे हैं। वहीं पर इस मृत शरीर का विधिवत् संस्कार करेंगे।

**महाराज**—(बहुत ही दुःख से) हाय, हाय! बड़ा अनर्थ हो गया।

**रानी**—हाँ राजन्! बहुत ही बड़ा अनर्थ हो गया। (विह्वल होकर) हाय देव! आपके इस न्यायपूर्ण शासन में यह क्या हो गया ?

**महाराज**—हाँ देवि! सचमुच में आज तो गजब ही हो गया (आगे बढ़कर) आवो, आवो एक बार अंत में गुरुदेव के शरीर की वंदना तो कर लें। (दोनों ही पंचांग नमस्कार करते हैं।) नमोस्तु गुरुदेव! नमोस्तु! नमोस्तु! नमोस्तु। (पुनः मंत्री द्वारा प्रदत्त नारियल लेकर राजा मुनिराज के सम्मुख चढ़ाते हैं। सब लोग जय-जयकार ध्वनि से आकाश गुंजा देते हैं।)

(सवारी और सेना निकल जाती है पुनः दो महिलाएँ आकर चर्चा करती हैं)

**स्मृति**—सखी ईहा! आवो-आवो, क्या तुमने कुछ सुना ?

**ईहा**—हाँ सखी, कुछ सुना तो सही, किन्तु जिज्ञासा तृप्त नहीं हुई तभी तो तुम्हें ढूंढते-ढूंढते मैं यहाँ आ पहुँची हूँ। तुम मुझे अब सभी बातें सुना दो।

**स्मृति**—हाँ सुनो ईहे! सुनो! अभी-अभी तो महातपस्वी समाधिगुप्त की विमानयात्रा यहाँ से निकली है, मैंने स्पष्टतया देखा है।

**ईहा**—उसे तो मैंने भी देखा है। फिर आगे क्या हुआ ?

**स्मृति**—उसका सिर मुंडवा कर, फटे कपड़े पहनाकर उसके माथे में पाँच बेलफल बँधवाये हैं।...

(इसी बीच में सिंधुमती को गधे पर बिठाकर लोग उसके आगे-आगे ढोल बजाते हुए आ रहे हैं। तमाम जनसमुदाय इकट्ठा हो जाता है।)

**ईहा**—बहन! यह क्या है ? (आश्चर्य से आँखें फाड़-फाड़कर देखने लगती है।

**स्मृति**—बस बहन! यह वही दृश्य है। हाँ तो देखो ना, पाप का फल कितनी जल्दी मिल गया।...अभी क्या है बहन! आगे देखना मुनि हत्या का फल क्या होता है ? (सभी चले जाते हैं)

(कुछ देर बाद कुष्ट रोग से ग्रसित सिंधुमती विलाप करते हुए प्रवेश करती हैं।)

**सिंधुमती**—हाय, हाय! अब मैं कहाँ जाऊँ ? उस दुष्टात्मा नंगे ने मुझे शाप दे



दिया। अब मैं इस रोग की वेदना कैसे सहूँ। अरे पतिदेव! तुमने मुझे कैसे छोड़ रखा ? अरे बाप रे... अरे भगवान! मैं भूखी मर रही हूँ। कोई तो सुनो रे! मुझे एक रोटी दे दो।

(जोर-जोर से चिल्लाते हुए रोती है)

(लकड़ी काटने वाला पुरुष सामने आकर कपड़े से नाक बंदकर पूछता है)

**पुरुष**—तू कौन है ? यहाँ क्यों आ गई ? अरे रे रे! मेरी तो नाक फटी जा रही है। तेरे शरीर से कितनी भयंकर दुर्गन्ध निकल रही है। जा-जा! यहाँ से भाग जा।

**सिंधुमती**—अरे भइया! मैं कहाँ जाऊँ ? मैं तो मरी... (गिर पड़ती है फिर उठकर) अरे भइया! एक पैसा दे दो... मैं तो दो-तीन दिन से भूखी हूँ।

**पुरुष**—तू है कौन ? तेरा शरीर तो खूब गोरा गुमटा दिख रहा है क्या कोई महारानी थी ?

**सिंधुमती**—अरे भइया! न पूछो, न पूछो...। मैं महारानी से कम नहीं थी (आँसू पोंछकर) लेकिन एक नंगे भिखारी ने मेरी यह दशा कर दी है।

**पुरुष**—(आश्चर्य से) ऐं! नंगे ने ? वह कौन था ? मुझे भी तो बता दे।

**सिंधुमती**—मैं गिरिनगर के राजश्रेष्ठी की सेठानी हूँ। मैं महारानी से भी अधिक सुंदर थी (रोने लगती है पुनः) एक दिन बसंत विहार में मेरे स्वामी ने मुझे नंगे साधु को खाना खिलाने के लिए भेज दिया। तब मुझे गुस्सा आया। मैंने उस दुष्ट को कड़ुवी तूमड़ी खिला दी।

**पुरुष**—और उसने खा ली ? (विस्मय से मुंह फाड़ता है।)

**सिंधुमती**—हाँ, कहते हैं कि ये नंगे साधु बड़े शांत परिणामी, बड़े समताभावी होते हैं। फिर वह मर गया। तब राजा ने मुझे निकाल दिया और दूसरे दिन ही मुझे सारे शरीर में कुष्ठ फूट निकला....... (रोती है)

**पुरुष**—(मुंह बिगाड़कर) तभी तो तुझे ऐसा फल मिला। अरे बहन! क्या महात्माओं की हत्या से किसी को शांति मिल सकती है ? और फिर जैन मुनि तो कभी भी शाप नहीं दे सकते, वे तो पूर्ण क्षमाशील होते हैं। हाय! तूने बहुत बड़ा पाप किया है (दूर हटकर) अभी तो क्या ? जब तुझे नरकों के दुख भोगने पड़ेंगे, तब पता चलेगा।

**सिंधुमती**—अरे भइया! पानी पिला दे। हाय रे। (जोरों से रोने लगती है) दोनों चले जाते हैं।)

*(पटाक्षेप)*

(कनकपुर नगर के राजा सोमप्रभ के पुरोहित का नाम सोमदत्त था, उसकी भार्या लक्ष्मीमती थी। सोमदत्त के बड़े भाई सोमशर्मा ने लक्ष्मीमती से संबंध स्थापित कर लिया। यह बात सोमशर्मा की भार्या सुकांता ने अपने देवर से कह दी। उसने इस घटना से मुनि दीक्षा ले ली, तब सोमशर्मा पुरोहित हो गया। एक समय राजा पुरोहित के साथ शकट देश के राजा के साथ युद्ध करने निकले। प्रस्थान में सोमदत्त मुनि के दर्शन होने से भाई सोमशर्मा ने उसकी हिंसा कर डाली। उसका फल उसे क्या मिला, सो देखिए–)

## द्वितीय दृश्य

**समय—**रात्रि

**स्थान—**महल

| | |
|---|---|
| 1. सोमशर्मा | पुरोहित का बड़ा भाई |
| 2. सुकान्ता | पुरोहित के भाई की पत्नी |
| 3. सोमदत्त | पुरोहित |
| 4. लक्ष्मीमती | पुरोहित की भार्या |
| 5. चपला | दासी |
| 6. स्मृति | कन्या |
| 7. ईहा | कन्या |

**सोमशर्मा—**क्या करूँ, समझ में नहीं आता ? उस मनमोहनी के अधरामृत का पान किये बिना तो मेरा जीवन निरर्थक ही है। मैं राजपुरोहित का ही तो पुत्र हूँ, भले ही आज मेरा छोटा भाई पुरोहित पद पर है तो क्या होता है ? क्या मेरा सम्मान कोई कम है ?... (कुछ सोचकर) मैं क्यों न उस लक्ष्मीमती को अपनी लक्ष्मी बना लूँ। अरी चपले! इधर आ।

**चपला—**आई, सरकार आ गई। कहिये, क्या आज्ञा है ?

**सोमशर्मा—**देख! मैं तुझे सारी अपनी स्थिति बताए देता हूँ। तू तो मेरी पूर्ण विश्वासपात्र है। हाँ, ध्यान रख, तेरी मालकिन से बहुत सावधान रहते हुए यह काम करना है।

**चपला—**(हँसकर) कहिए मालिक! आप चिन्ता न कीजिये। मैं इन कार्यों में बहुत ही कुशल हूँ।

**सोमशर्मा—**हाँ, तो अब मुझे लक्ष्मीमती के बिना चैन नहीं है। मैं कई दिनों से बहुत ही बेचैन हो रहा हूँ। बस तू उसे मेरी प्रिया बना दे, तू जो चाहेगी सो



इनाम दूँगा। तेरी जन्म-जन्म की गरीबी को मैं समाप्त कर दूँगा।

**चपला—**ऐं! लक्ष्मीमती! ओ हो। वह तो आपके छोटे भाई की पत्नी है। वह तो आपकी पुत्रीतुल्य है। फिर आप यह क्या...।

(बीच में ही बात काटकर)

**सोमशर्मा—**बस-बस! तू मुझे उपदेश न सुना, मैंने तुझे उपदेश सुनाने के लिए नहीं बुलाया है, बल्कि मेरी पीड़ा दूर करने के लिए बुलाया है।

**चपला—**(कुछ सहमकर) ठीक, तो आप मुझे क्या इनाम देंगे ?

**सोमशर्मा—**जो तू चाहेगी।

**चपला—**अच्छा! मैं मिनटों में आपका काम बनाये देती हूँ।

(चपला चली जाती है और पुरोहितजी अपनी जनेऊ को ठीक करते हुए दर्पण में अपना तिलक देखते हैं, चोटी को खड़ी करते हैं और सोचते हैं)

**सोमशर्मा—**ओह! सुना है कि महादेव जी ने अपने तीसरे नेत्र से अग्नि निकालकर कामदेव को भस्म कर दिया था फिर भला यह कैसे जीवित हो गया... ? हाँ, मालूम है। शायद उसे पार्वतीजी ने संजीवनी औषधि से जिला दिया था। खैर कुछ भी हो, बड़े-बड़े योद्धा भी जिस कामदेव के वश में हैं, इंद्र, धरणेन्द्र और चक्रवर्ती भी जिसके बाणों के निशाने हो चुके हैं, भला वह कामदेव हम जैसों को कैसे छोड़ सकता है ?...

अरे! मैंने लक्ष्मीमती को बुलाने तो भेज दिया है लेकिन यदि मेरी लक्ष्मी जी को पता चल जायेगा तो क्या होगा ? और अपने प्राणों की रक्षा तो करनी ही है और वह लक्ष्मीमती के संभोग बिना सम्भव नहीं है। बड़े-बड़े ऋषियों ने भी तो स्त्रियों के आधीन होकर अपनी तपश्चर्या नष्ट कर डाली। सही मायने में देखा जाये तो परस्त्री है क्या चीज ? और यह तो छोटे भाई की ही तो भार्या है फिर क्या मेरा इस पर अधिकार नहीं है...

(चपला लक्ष्मीमती को साथ लेकर प्रवेश करती है।)

**सोमशर्मा—**(खुशी से नाचकर) वाह चपले वाह। तूने आज अपने नाम को सार्थक कर दिया। शाबाश! तूने मुझे कृतार्थ कर दिया।

**चपला—**महाराज! मैं इस प्रशंसा के योग्य नहीं हूँ। यह तो आप अपना ही सौभाग्य समझिये कि ये लक्ष्मीमती जी मानो जैसे आपके लिए उत्कंठित ही हो रही हों।

(लक्ष्मीमती लज्जा से सकुचाती हुई एक तरफ होने लगती है और सोमशर्मा

उसका हाथ पकड़कर अपनी ओर खींच लेते हैं तथा कुर्सी पर बैठकर उसे बिठा लेते हैं। चपला निकल जाती है।)

**सोमशर्मा—**देवी! अब लज्जा को छोड़ो और मेरी ओर देखो। इस समय मैं तुम्हारे विरह में पागल हो रहा हूँ।

(लक्ष्मीमती हाथ छुड़ाने की कोशिश करती है।)

**सोमशर्मा—**बस-बस, अब यह छुड़ाने की चेष्टा मत करो। देवि! मैं आपका दास हूँ अब मुझे आज्ञा करो और मेरे साथ भोगों को भोगकर अपना यौवन सफल करो। अब तो मुझे गाढ़ आलिंगन में आबद्ध करो।

(अंदर से सुकांता आवाज लगाती है।)

**सुकांता—**अरी चपले! चपले! तू कहाँ है ? पता नहीं चलता है कि यह निगोड़ी कहाँ चली गई ? इतनी रात हो गई है, न तो अभी तक पुरोहित जी पधारे हैं और न देवर जी ही। ओ चपले!...

(पुरोहितजी जल्दी से उठकर भाग जाते हैं और लक्ष्मीमती खड़ी हो जाती है।)

**लक्ष्मीमती—**आइये भाभी जी! बैठिए! (घबड़ा रही है)

**सुकांता—**ऐं लक्ष्मी! तू घबरा क्यों रही है ? और यहाँ से अभी कौन भागा ? पट-पट की पदचाप किसकी सुनाई दी ?

(गुस्से में गुर्राने लगती है)

**लक्ष्मीमती—**(डरते हुए) न, न, भाभी जी। यहाँ तो कोई भी नहीं आया। मैं जब से अकेली बैठी हूँ।

**सुकांता—**तू आज इस बैठक में कैसे आ गई ?

**लक्ष्मीमती—**यूँ ही आ गई, कमरे में मन नहीं लगा तो मैंने सोचा चलो, बैठक में ही थोड़ी देर आराम करें।

**सुकांता—**(संदेह से) हूँ, मालूम पड़ता है कि कुछ दाल में काला है।

(सुकांता बड़बड़ाती हुई चली जाती है पुनः पुरोहितजी आ जाते हैं)

**सोमशर्मा—**क्या हुआ ?

**लक्ष्मीमती—**जिठानी जी आ गई थीं, कहती थीं कि कुछ दाल में काला है।

**सोमशर्मा—**अरे, बकने दो, आओ अपन तो अपनी काम अग्नि को शांत करें। ये तो औरतों का झगड़ा चलता ही रहता है।

(ठुड्डी में हाथ लगाकर मुख को ऊँचा करते हुए) तुम कुछ भी चिंता नहीं करना।

(सोमदत्त अंदर से आवाज लगाता है...)



**सोमदत्त—**लक्ष्मीमती।

(लक्ष्मीमती आगे बढ़कर पति का स्वागत करती है सोमशर्मा निकल जाते हैं।)

**सोमदत्त—**प्रिये! यहाँ आते ही दिनभर की थकान समाप्त हो जाती है। सचमुच ही जैसे विष्णु भगवान को लक्ष्मी प्यारी है वैसे ही तुम मुझे प्यारी हो।

**लक्ष्मीमती—**स्वामिन्! आपका असीम स्नेह मिलना यह मेरा अहोभाग्य ही है। मेरे लिए भी तो बस एक आप ही सर्वस्व हैं।

(दोनों चले जाते हैं। पुनः आकर सोमदत्त अकेले कुछ सोच रहे हैं)

**सोमदत्त—**संसार में विधाता ने सुख के लिए एक ही ऐसी सृष्टि निर्माण की है कि जिसके आगे तीन लोक का राज्य भी फीका है।

अहो! क्या स्त्री सुख से भी बड़ा कोई सुख विश्व में हो सकता है ? मेरी लक्ष्मीमती भार्या मुझे प्राणों से भी अधिक प्यारी है और हो भी क्यों न, उसका निखरता हुआ रूप, छलकता हुआ यौवन, कोयल से भी अधिक मीठी वाणी, जब वह हँसती है तब ऐसा लगता है कि मानों फूल ही झड़ रहे हैं। उसकी हंस जैसी चाल, उसकी संगीत कला, उसकी कार्यकुशलता, सभी एक से एक बढ़कर ही तो हैं।... उसमें मेरा कितना विश्वास है, वह सीता से बढ़कर शीलवती सती है, मैना से बढ़कर पतिसेवा परायणा पतिव्रता है। ओह! उसने मुझे अपने प्रेमपाश में बाँध रखा है। मैं उसे स्वप्न में भी तो नहीं भुला पाता हूँ।

(सुकांता प्रवेश करती है)

**सोमदत्त—**आइये भाभी जी, आइये। आज कैसे आपने मेरा कक्ष पवित्र किया है।

**सुकांता—**देवर जी। मैं कुछ आश्चर्यकारी घटना सुनाने आई हूँ ?

**सोमदत्त—**सुनाइये, जल्दी सुनाइये। (उत्सुकता प्रकट करते हुए)

**सुकांता—**आपकी भार्या लक्ष्मीमती महा कुलटा है।

**सोमदत्त—**(चौंककर) ऐं! भाभी जी! आप क्या कह रही हैं ? (आवेश में) जरा होश में बोलिये। मेरी प्रिया को क्या आप लांछन लगाना चाहती हैं ?

**सुकांता—**हाँ-हाँ देवर जी! जो मैं कह रही हूँ वह बिल्कुल सत्य है। चलो मेरे साथ चलो, मैं तुम्हें स्पष्ट दिखाऊँ।

**सोमदत्त—**(दीर्घ निःश्वास लेकर) ओह! यह क्या ?... अच्छा तो चलिये मैं आपके साथ चलकर देखना चाहता हूँ।

**सुकांता—**चलिये, चलिये! आपके अपने भ्राता की और अपनी लक्ष्मीजी की करतूतों को देखिये।

(दोनों उठकर जाते हैं। इधर सोमशर्मा और लक्ष्मीमती हँसते हुए और परस्पर में हाथ पकड़े हुए प्रवेश करते हैं)

**लक्ष्मीमती—**मैं आपके भाई को इस तरह रिझा लेती हूँ कि वे मेरे प्रेम में पागल हो जाते हैं। (हँसने लगती है)

**सोमशर्मा—**वह तो बेवकूफ है। छोड़ो उसकी बात... अपनी तो गुलछर्रे उड़ रही हैं और कुछ बढ़िया बात सुनाइये।

**लक्ष्मीमती—**यह लीजिए रत्नहार, आपके भाई को महाराजा ने उपहार में आज दिया है।

**सोमशर्मा—**ओ हो! (हर्ष में विभोर होकर उसे देखते हुए) क्या सुंदर हार है! फिर भी बल्लभे! तुम्हारे प्यार से अधिक मोहकता इसमें नहीं है, यह जड़ ही तो है।

(सुकांता दूर से झाँकती है और देवर को दिखाती है पुनः)

**सुकांता—**(दाँत किटकिटाते हुए) देखो भइया! मुझे तो इतनी गुस्सा आ रही है कि दुष्टा का सिर धड़ से अलग कर दूँ।... पापिनी, कुलकलंकिनी क्या यह मुख दिखाने लायक है ?

(सोमदत्त कपड़े से अपना मुख ढँककर वापस चला जाता है। कुछ आहट पाने से इधर-उधर देखकर ये दोनों भी सहमे हुए चले जाते हैं पुनः सोमदत्त वापस आता है।)

**सोमदत्त—**आह! प्रभात हो गया, मुझे तो रात भर किंचित् भी नींद नहीं आई।... स्त्रियों का यह चरित्र! आह! मेरा तो हृदय धड़क रहा है। मैं क्या करूँ ? सचमुच में इस असारसंसार में अगर कुछ सारभूत है तो एक धर्म ही है! बस उसके बिना और कुछ भी अपने लिए हितकर नहीं है।

(दीर्घ श्वांस लेकर)

ओह! जिस लक्ष्मी को मैं अपने हृदयकमल में विराजमान किये हुए था, वो ही लक्ष्मी यह है क्या मेरी आँखें धोखा तो नहीं दे रही है, क्या मैंने कुछ ऐसा ही स्वप्न तो नहीं देख लिया है ? नहीं-नहीं, बिल्कुल नहीं, इन आँखों ने बिल्कुल ही स्पष्ट रूप से उसी लक्ष्मी को तो देखा है।

बड़े भाई ओह! पितातुल्य और उनके साथ यानी जेठ के साथ रमते हुए। धिक्कार हो ऐसी कुलटा स्त्रियों को!

(कुछ सोचकर) अच्छा तो ठीक, बहुत ठीक (प्रसन्न होकर) बस-बस मैंने अपने जीवन का सार पा लिया। हाँ, बस किससे पूछना है अब तो शीघ्र ही गुरुदेव के पादमूल में पहुँचकर जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण कर लेनी है। बहुत ही



बढ़िया विचार उत्पन्न हुआ है। ओहो! आत्मा का सच्चा सुख, परमानंदमय अनुपम स्वात्मानुभव रस का आस्वादन! मैं कृतकृत्य हो गया।

(चला जाता है, उधर से स्मृति और ईहा प्रवेश करती हैं)

**ईहा—**बहन! कुछ सुना ?

**स्मृति—**हाँ, मैंने तो सब कुछ सुन लिया है और तुझे भी सुनाती हूँ।

**ईहा—**हाँ, हाँ, सुनाओ।

**स्मृति—**सखी! अपने महाराजा सोमप्रभ के जो पुरोहित थे सोमदत्त, उनको तो तू जानती ही है।

**ईहा—**हाँ, और उनकी भार्या लक्ष्मीमती को तथा उनके भाई सोमशर्मा और उनकी भार्या सुकांताजी को मैं खूब जानती हूँ।

**स्मृति—**और आगे ?

**ईहा—**न, और आगे की मुझे कुछ मालूम नहीं है।

**स्मृति—**हाँ, तो सुन। बहुत दिनों से सोमशर्मा का लक्ष्मीमती के साथ व्यभिचार चल रहा था।

**ईहा—**(आश्चर्य से) अच्छा! तो फिर पता कैसे चला ?

**स्मृति—**फिर क्या हुआ, सोमदत्त ने घर से विरक्त होकर जैनेश्वरी दीक्षा ले ली और वे विश्ववंद्य महामुनि बन गये।

**ईहा—**फिर क्या हुआ ?

**स्मृति—**फिर राजा ने सोमशर्मा को पुरोहित पद पर प्रतिष्ठित कर दिया है।

**ईहा—**अच्छा! तो क्या राजा को उसके व्यभिचार की बात नहीं मालूम हुई।

**स्मृति—**नहीं, तभी तो राजा ने उसे सम्मान्य पद पर प्रतिष्ठित कर दिया है।

**ईहा—**तो अब राज्य की व्यवस्था सुचारु है ना ?

**स्मृति—**शकट देश के महाराजा वसुपाल के यहाँ एक राजहाथी है वह बहुत ही सुंदर और बलवान् है। उसका नाम त्रिलोकसुंदर है। अपने महाराजा ने दूत को भेजकर उस हाथी की माँग की थी चूँकि शकट देश अपने अधीन ही तो था, किन्तु सुना है कि राजा वसुपाल ने हाथी देने से इंकार कर दिया है।

अतः महाराज प्रातःकाल युद्ध के लिए प्रस्थान करेंगे।

**ईहा—**अच्छा! फिर क्या होगा ? सो भी बतलाइये।

**स्मृति—**फिर आगे होने के बाद ही सुनाऊँगी।

(दोनों चली जाती हैं)

*(पटाक्षेप)*

(महाराजा सोमप्रभ सेना सहित प्रस्थान कर शहर के बाहर ठहर गये। सोमदत्त मुनि को सामने देख सोमशर्मा पुरोहित ने अपशकुन बताकर उन्हें मारना चाहा किन्तु अन्य निमित्तज्ञ ने राजा को मुनिदर्शन का शकुन बताकर प्रसन्न किया और हुआभी वैसा ही। तब सोमशर्मा ने कुपित होकर मुनि को मार डाला, अनंतर उसके फलस्वरूप राजदण्ड पाकर कुष्ट रोग से पीड़ित हो दुर्गति में चला गया।)

## तृतीय दृश्य

**समय**—प्रातःकाल

**स्थान**—वन में शिविर का प्रांगण।

| | |
|---|---|
| 1. सोमप्रभ | कनकपुर नरेश |
| 2. सोमदत्त | पुरोहित |
| 3. मंत्री | |
| 4. विश्वदेव | पुरोहित |
| 5. वसुपाल | शकटपुर नरेश |
| 6. सभासद | |
| 7. सैनिक दल | |
| 8. दूत | शकटपुर नरेश का |
| 9. द्वारपाल | कनकपुर नरेश का |
| 10. स्मृति | कन्या |
| 11. ईहा | कन्या |

(महाराज सोमप्रभ चिंतित मुद्रा में बैठे हैं, पुरोहित सोमशर्मा बोल रहे हैं और कुछ सभासद उपस्थित हुए सुन रहे हैं।)

**सोमशर्मा**—महाराज आप बिल्कुल चिंता छोड़िए, अपने यहाँ शास्त्रों में सभी विघ्नों की शांति के लिए उपाय बतलाए गये हैं। देखिए, इसी नंगे साधु को मारकर उसके खून को सब दिशाओं में क्षेपण कर देने से संपूर्ण विघ्नों की शांति हो जावेगी, फिर आप आगे बढ़िए।

**राजा**—(दोनों हाथ से अपने कान ढ़ककर खेद और आश्चर्य से) आह! पुरोहित! तुमने यह क्या कह दिया ? ओह! हिंसा ? और मुनि की हिंसा ? हाय! हाय! ऐसे शब्द तो सुनना भी महापाप है।

**पुरोहित**—(निर्भीकता से) महाराज! कुछ भी हो, इस मंगलमय प्रस्थान में नंगे भिखारी का दर्शन तो... बहुत बड़ा अनिष्टसूचक है, अमंगलसूचक है। अब



आप पुनः आगे प्रस्थान कैसे करेंगे ?

**राजा**—जो भी हो (गाल पर हाथ रखकर कुछ सोचकर) तो क्या वापस चलना चाहिए! मंत्रिन्! बोलो क्या करना ?

**मंत्री**—महाराज की जैसी आज्ञा हो।

(एक निमित्तज्ञानी विश्वदेव प्रवेश करते हैं।)

**विश्वदेव**—महाराजाधिराज की जय हो, नंदो, वर्धो महाराजाधिराज।

**राजा**—पधारिये पण्डित जी, पधारिये। आप बड़े मौके से आये!

**विश्वदेव**—आज्ञा दीजिए महाराज।

**राजा**—हम लोग तो शकट देश के राजा को जीतने के लिए निकले हुए हैं किन्तु...।

**विश्वदेव**—किन्तु क्या महाराज! आप स्पष्ट कहिये।

**राजा**—शाम को यहाँ पर पड़ाव डाल दिया और उसी समय एक नग्न दिगम्बर मुनि आकर स्कंधावार में एक तरफ ध्यानस्थ खड़े हो गये।

**विश्वदेव**—(गद्‌गद होकर) जय हो महाराज! जय हो, आप तो बड़े भाग्यशाली हैं। ओहो! 'रवात्पतिता वो रत्नवृष्टिः' आपके लिए तो आकाश से रत्न की वर्षा हो गई।

**राजा**—(आश्चर्य से निमित्तज्ञानी का मुख देखते हुए) क्या, क्या ? आप क्या कह रहे हैं पंडित जी ? यह तो मेरे कार्य में बहुत बड़ा अपशकुन हो गया है।

**विश्वदेव**—(विस्मय से) सो कैसे ?

**राजा** —पंडितजी! नंगों का दर्शन तो अशुभ ही है।

**विश्वदेव**—ओहो! आपको किसने भरमा दिया ?

**राजा**—(सोमशर्मा पुरोहित की तरफ देखकर विश्वदेव की तरफ देखते हुए) क्यों पंडित जी! क्या ऐसा नहीं है ?

**विश्वदेव**—(उच्च स्वर से) बिल्कुल नहीं महाराज! अरे! दिगम्बर मुनि का दर्शन तो सम्पूर्ण मंगलों में एक मंगल है और सर्वश्रेष्ठ शकुन है। सुनिए महाराज! मैं आपको यह बात सप्रमाण सिद्ध करके बताता हूँ।

**राजा**—(उत्सुकता से) हाँ, बताइए पुरोहित जी! मैं तो आज बहुत ही चिंतित हो गया था।

**विश्वदेव**—जिसने भी आपसे नग्न मुनि के दर्शन से अपशकुन बताया है उसने शास्त्रज्ञान से अपनी अनभिज्ञता ही व्यक्त कर दी है। सभी प्राणियों को अभयदान देने वाले ये मुनिराज सर्वकार्य की सिद्धि को करने वाले हैं। वे यति-

पुंगव समस्त कार्यों की सफलतारूप हैं, समस्त शकुनों के उपमाभूत हैं, संपूर्ण कल्याण को करने वाले ऐसे ये मुनिराज आपको दिख रहे हैं। प्रमाण देखिए—

मार्ग में सामने से यतीश्वर को आते हुए देखकर युद्ध के लिए प्रयाण करते हुए श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा है कि—

**आरुरोह रथं पार्थ! गांडीवं चापि धारय।**
**निर्जितां मेदिनी मन्ये, निर्ग्रंथोयतिरग्रतः।।**

हे अर्जुन! तुम रथ पर चढ़ जावो और गाँडीव धनुष को धारण कर लो। मैं इस पृथ्वी को जीती हुई ही समझ रहा हूँ, चूँकि सामने निर्ग्रंथ यति दिख रहे हैं।

उसी प्रकार से संपूर्ण शकुन शास्त्रों में विलक्षण बुद्धि वाले विद्वानों ने समस्त लोक में प्रसिद्ध ऐसा एक सुभाषित कहा है—

**श्रमणस्तुरगो राजा, मयूरः कुंजरो वृषः।**
**प्रस्थाने वा प्रवेशे वा, सर्वे सिद्धिकरा स्मृताः।।**

श्रमण मुनि, घोड़ा, राजा, मोर, हाथी और बैल ये सभी प्रस्थान के समय अथवा प्रवेश करने के समय दिखें तो सिद्धि को करने वाले माने गये हैं।

ऐसा ही ज्योतिष शास्त्रों में भी कहा है—

**पद्मिन्यो राजहंसाश्च, निर्ग्रंथाश्च तपोधनाः।**
**यद्देशमभिगच्छंति तद्देशे शुभमादिशेत्।।**

पद्मिनी जाति की स्त्रियाँ, राजहंस और निर्ग्रंथ तपोधन ये जिस देश में प्रवेश करते हैं उस देश में शुभ-मंगल हो जाता है।

और भी देखिए राजन्! सभी जनों को पुण्य प्रदान करने वाले ऐसे धर्मशास्त्रों में भी विद्वानों ने बतलाया है—

**योगी च ज्ञानी च तपोधनाश्च, शूरोऽथ राजा च सहस्रदश्च।**
**ध्यानी व मौनी च तथा शतायुः, संदर्शना देव पुनन्ति पापम्।।**

योगी, ज्ञानी, तपोधन—दिगम्बर मुनि, शूरवीर, राजा, अश्व, ध्यानी, मौनी और सौ वर्ष की आयु वाले मनुष्य ये अपने दर्शन से ही पापों को धो डालते हैं।

इसलिए हे राजाधिराज! आप का यह प्रस्थान शत्रु से विजयसूचक ही है। इस मार्ग में ये मुनिराज शकुनरूप ही हो रहे हैं। ये साधु संपूर्ण जगत को पवित्र करने वाले हैं। क्रोध, मान आदि कषायशत्रुओं का नाश कर चुके हैं। इन साधु-पुंगव के दर्शन से आपकी कार्यसिद्धी निश्चित ही है। मुनिराज के अवलोकन का फल आपको तत्क्षण ही मिलने वाला है। आप देखिये! प्रातः ही शकट देश का राजा, त्रिलोकसुंदर नामक हाथी लाकर आपको भेंट करेगा।



**राजा—**(प्रसन्नचित्त होते हुए) तो फिर हमें आज यहीं पर ठहरना उचित है।

**विश्वदेव—**हाँ महाराज! आप आज यहीं विराजिये और हमारे निमित्तज्ञान की परीक्षा कीजिए।

(सभा विसर्जित हो जाती है। राजा अपने प्रधानमंत्री के साथ सांयकाल में उसी बगीचे में टहल रहे हैं)

**राजा—**मंत्रिन्! दिगम्बर जैन मुनियों का माहात्म्य अचिन्त्य है, सो ठीक ही है क्योंकि ये प्राकृतिक वेष को धारण करने वाले हैं। ये नंगे नहीं माने जाते।

**मंत्री—**हाँ महाराज! यथाजातरूप के धारी ये महामुनि अगणित गुणों से युक्त होते हैं। कभी किसी से द्वेष या क्रोध नहीं करते हैं। ये परम क्षमाशील होते हैं।

**राजा—**अच्छा चलो, अब विश्राम करें। मन तो अतीव उत्सुकता से प्रातःकाल की प्रतीक्षा कर रहा है।

**मंत्री—**सो ठीक ही है महाराज।

(दोनों चले जाते हैं। पुनः प्रातः राजसभा लगी हुई है और सामने से सेना की धूल दिख रही है। सैनिक लोग शस्त्र ले-लेकर खड़े हो जाते हैं)

**एक सैनिक—**(गरजकर) किसकी मौत नजदीक आई हुई है ? कौन यह धूल उड़ाता हुआ आ रहा है ?

**दूसरा सैनिक—**(उछलकर) आने दो, हम लोग भी तो हर वक्त शत्रुओं की प्रतीक्षा ही करते रहते हैं।

(एक दूत सामने आता है और आगे बढ़कर द्वारपाल से अंदर जाने की आज्ञा चाहता है)

**द्वारपाल—**(अंदर घुसकर) महाराज की जय हो, महाराज एक दूत आया है और वह आपसे मिलना चाहता है।

**राजा—**अंदर आने दो।

**द्वारपाल—**महाराज को मेरा प्रणाम स्वीकार हो।

(घुटने टेक कर नमस्कार करता है।)

**राजा—**(हाथ के इशारे से एक तरफ खड़े होने का संकेत करते हुए) कहो, तुम कहाँ से आये ?

**दूत—**महाराज! आपके प्रेम से प्रेरित होकर शकट देश के राजा वसुपाल आपसे मिलने पधार रहे हैं।

**राजा—**ठीक है मंत्री! देखिये, उनका स्वागत कीजिये।

**मंत्री—**जो आज्ञा महाराज।

(मंत्री बाहर जाकर बहुत लोगों के साथ राजा वसुपाल को लेकर आते हैं और त्रिलोकसुंदर हाथी को बाहर प्रांगण में खड़ा कर देते हैं)

**वसुपाल—**(प्रवेश करके) कनकपुर नरेश महाराज को मेरा नमस्कार हो (रत्नों का थाल भेंट में रखकर) त्रिलोक सुंदर हाथी भी सामने प्रांगण में आपकी स्वीकृति को चाह रहा है।

**सोमप्रभ—**बहुत ठीक राजन्! (हाथ के संकेत से पास के आसन पर बिठाते हुए तथा प्रसन्न मुद्रा में) कहिये। शकट देश में सर्वत्र कुशल है न और आप भी पूर्णतया कुशल हैं न ?

**वसुपाल—**पृथ्वीनाथ! आपके प्रसाद से हम और शकटदेशवासी सभी कुशलक्षेम से हैं और हम लोग सदैव आपके कुशल मंगल की कामना किया करते हैं।

(सोमप्रभ राजा भी उन्हें यथोचित भेंट देकर विदा कर देते हैं और आप हाथी को लेकर अपने नगर में वापस आ जाते हैं)

(स्मृति और ईहा प्रवेश करती हैं।)

**ईहा—**बहन! कई दिन हुए आपसे मिलना नहीं हुआ आज तो मैं आपके लिए बेचैन हो उठी।

**स्मृति—**(मुस्कराकर) बहन! आपसे मिले बगैर चैन तो मुझे भी नहीं पड़ती है। अच्छा! अब कुछ काम की बात करें।

**ईहा—**हाँ, हाँ, मुझे कुछ नया-नया समाचार सुनाओ।

**स्मृति—**सुनो-सुनो, अपने कनकपुर के नरेश शकटदेश के राजा का राजहाथी चाहते थे सो तो तुम्हें मालूम ही है।

**ईहा—**हाँ, और वह तो उन्हें मिल भी गया, यह भी मालूम है।

**स्मृति—**पुनः आगे का हाल ?

**ईहा—**अब आगे का ही तो आपसे सुनना है।

**स्मृति—**(कुछ मुख बिगाड़कर) क्या सुनाऊँ सखी! गजब हो गया।

**ईहा—**(आश्चर्य से) ऐं, क्या हुआ ? जल्दी सुनाओ सखी क्या हुआ ?

**स्मृति—**अरे जो राजा सोमप्रभ का सोमशर्मा पुरोहित था न, उसे तो तुम जानती ही हो!

**ईहा—**खूब-खूब, वही न कि जो छोटी भावज से व्यभिचार करता है और जिसे सोमदत्त की दीक्षा के बाद राजा ने पुरोहित बना दिया है।

**स्मृति—**हाँ-हाँ वही। कल महाराज को विजय लाभ मिलने के बाद वह खिसिया गया। फिर उसे जब कुछ नहीं सूझा तब रात्रि में नंगी तलवार लेकर



वहीं बगीचे में पहुँचा जहाँ कि वे महामुनि सोमदत्त ध्यानस्थ खड़े हुए थे और क्रोध में आगबबूला होकर उन मुनि के टुकड़े-टुकड़े कर डाले।

**ईहा—**(कांपकर) हाय रे! यह क्या किया ? उस पापी ने मुनिहत्या कर डाली।

**स्मृति—**सखी! मुनिहत्या और भ्रातृहत्या, दोनों ही तो कर डाली।

**ईहा—**हाँ सच है ये सोमदत्त उसी के तो लघु भ्राता थे कि जिन्होंने अपनी भार्या का व्यभिचार देखकर दीक्षा ले ली थी।

**स्मृति—**बस इसीलिए तो वह उनसे बैर बाँधे हुए था कि जिसको निकालने का मौका उसे मिल गया।

**ईहा—**सखि! फिर क्या हुआ।

**स्मृति—**फिर क्या! महाराजा सोमप्रभ को पता चलते ही उन्होंने उसे दण्डित करके अपने देश से निकाल दिया।

**ईहा—**फिर अब वह कहाँ गया ? उसकी क्या स्थिति... (बीच में किसी के करुण क्रंदन की आवाज को दोनों सुनने लगती हैं।)

**ईहा—**बहन! यह करुण क्रंदन किसका है ?

(इतने में वह सोमशर्मा गलित कुष्ट से बिलखता हुआ प्रवेश करता है।)

**स्मृति—**देखा न, सामने यह वही पापी हत्यारा बिलख रहा है।

**ईहा—**(विस्मय से) अरे! इतनी जल्दी इसे कुष्ट रोग हो गया है।

(दोनों ही आँचल से अपनी नाक बंद करती हैं।)

**स्मृति—**इसके शरीर की दुर्गन्ध से तो नाक फटी जा रही है (किंचित् दूर सरक कर) सच है, मुनि हत्या का फल तो कुष्ट होगा ही किन्तु मुनि निंदा करने मात्र से भी तो कुष्ट हो जाता है ऐसा सुनने में बहुत बार आ चुका है।

**ईहा—**हाँ, हाँ बहन! हजारों उदाहरण तो मैंने भी सुन रखे हैं।

**सोमशर्मा—**अरे बहन जी! (रोते हुए) अब मैं क्या करूँ ? कहाँ जाऊँ ? मारे वेदना के चैन नहीं है। हाय रे! मैं मरा–मैं मरा–! बहन जी! मेरी रक्षा करो!

**स्मृति—**भाई ! धैर्य धारण करो, देखो, पाप कर्म का फल तो जीव को भोगना ही पड़ता है अब.....किंचित् शांति.....।

**सोमशर्मा—**(उठता है, गिरता है, फिर जोरों से चिल्लाता है) अरे भगवान! तू बड़ा निर्दयी है। मेरे ऊपर दया क्यों नहीं करता ?

**स्मृति—**भाई! तुमने जो मुनि हत्या की, इसी से तो यह कुष्ठ रोग हो गया है, अब अपने पापों का पश्चात्ताप करो जिससे कुछ पाप हल्का हो जावे।

**सोमशर्मा—**(दाँट किटकिटाते हुए) अरे वह दुष्ट साधु, ढ्रोंगी, पाखंडी। मैंने

उसकी बोटी-बोटी काटकर बिखेर दी फिर भी वह मुझे कष्ट दे रहा है। अच्छा! देख मैं तेरी क्या दशा करूँगा (पुनः रोने लगता है) हाय बाप रे! कोई मेरी रक्षा करो, मुझे प्यास लगी है, मर जाऊँगा। (बिलखता है)

**स्मृति**—चलो बहन! चलें, अपने से तो यहाँ खड़ा भी नहीं हुआ जाता और यह पापी तो अभी क्रोध कषाय में ही चूर है। इतना कठोर दण्ड इसे विधाता ने दिया है फिर भी यह पापों का प्रायश्चित्त करने को तैयार नहीं है।

**ईहा**—अब बेचारे का क्या होगा!

**स्मृति**—अरे! यह दुःख जो यहाँ दिख रहा है वह कुछ भी नहीं है। यह पापी तो नरकों में युग-युग तक न जाने कितने दुःख भोगेगा। चलो सखी! हम चलें।

(दोनों चली जाती हैं)

*(पटाक्षेप)*

# द्वितीय स्तम्भ

(हस्तिनापुर के राजश्रेष्ठी धनमित्र की भार्या धनमित्रा से एक कन्या उत्पन्न हुई जिसके शरीर से अत्यंत दुर्गन्धि निकल रही थी, इसलिए उसका नाम पूतिगंधा रखा गया। यौवन अवस्था में उसी नगर के वसुमित्र सेठ की वसुमती भार्या से उत्पन्न हुए कुमार श्रीषेण के साथ उसका विवाह हो गया किन्तु उसकी दुर्गन्धि से श्रीषेण घर छोड़कर भाग गया। तब वह पिता के घर आकर रहने लगी। अनंतर एक बार चारण मुनि के मुख से अपने पूर्व भव सुनकर तथा धर्म ग्रहण करके रोहिणीव्रत ले लिया, उसी का विस्तार देखिये)

## चतुर्थ दृश्य

**समय**—मध्यान्ह

**स्थान**—सेठ का महल

| | |
|---|---|
| 1. पूतिगंधा | दुर्गन्धित महिला |
| 2. चमेली | पड़ोसिन |
| 3. सास आदि | परिवार की महिलायें |
| 4. धनश्री | श्राविका |

(पूतिगंधा विलाप कर रही है, दूर-दूर खड़ी हुई महिलाएं नाक ढँककर हँस रही हैं। पड़ोस की एक चमेली नाम की महिला पहुँचकर उसे समझा रही है।)

**पूतिगंधा**—अरे भगवान! मैंने ऐसे कौन से पाप किए हैं ? बताओ तो सही, (रोते हुए) हाय हाय! मेरे पतिदेव कहाँ चले गये ? अब मेरा क्या होगा ?



**चमेली**—बहन! तुम इतना क्यों रो रही हो ? अब धीरज से समय तो निकालना ही पड़ेगा। देखो न, तुम्हारी सासू बक रही है कि कहाँ की बहू आई? उसकी दुर्गंधि से कल खाना हराम हो गया। मेरा बेटा भी तो न जाने कहाँ चला गया ? अब उसे जल्दी घर से निकालो। उस समय तुम्हारे ससुरजी उसे समझा रहे थे।

**पूतिगंधा**—(विस्मय से और उत्सुकता से) क्या समझा रहे थे ?

**चमेली**—वे कह रहे थे कि अपना पुत्र श्रीषेण तो कुपुत्र निकल गया। देखो न, उसने सातों व्यसन में से एक भी तो नहीं छोड़ा और चोरी करते हुए कोतवाल ने उसे पकड़ लिया तब राजदण्ड से वह बाँधकर देश से निकाला जा रहा था। बेचारे धनमित्र ने उस पर दया की और अपना स्वार्थ भी साधा। उसने कहा कि यदि तू मेरी पुत्री पूतिगंधा से शादी करना स्वीकार कर ले तो मैं तुझे बंधन से मुक्त करा सकता हूँ। चूँकि वह राजश्रेष्ठी था। श्रीषेण यद्यपि अच्छी तरह जानता था कि उस लड़की के शरीर से भयंकर दुर्गंध आ रही है कि कोई भी उसके पास ठहर नहीं सकता फिर भी उसने बंधन से छूटने के लिए स्वीकृति दे दी और राजश्रेष्ठी ने तुरंत ही उसे बंधन से छुड़वाकर उसके साथ पुत्री ब्याह दी। अब वह गया तो गया, आखिरकार पहले भी तो वह उस देश से निकाला जा रहा था। तुम्हारे ससुर के उतना कहने के बाद वे तुम्हारी सासूजी चुप हो गईं। अब देखो न, दूर से ही तुम्हें देख-देखकर नाक मुँह सिकोड़कर हँस रही हैं।

**पूतिगंधा**—(इधर-उधर देखते हुए आँसू पोंछकर) बहन! अब मेरे जीवन के दिन कैसे कटेंगे ? कैसे पेट भरूँगी ?

**चमेली**—तुम इतनी क्यों दुःखी हो रही हो ? तुम्हारे पिता ने बड़े धैर्य से तुम्हें इतने दिन अपने घर में रखा है। अभी भी तुम वहीं चली जाओ (कुछ सोचकर) हाँ बहन! तुम मेरी राय मानो, इस समय तुम्हें अपने पीहर चले जाना ही उचित है।

**पूतिगंधा**—(चिंतित मुद्रा से कुछ सोचकर) अच्छा बहन! मैं ऐसा ही करूँगी। (उठकर चल देती है)

(कुछ दिन बाद पूतिगंधा जिनमंदिर में वासुपूज्य भगवान की उपासना कर रही है। विशेष भक्ति में तल्लीन है। दर्शक लोग दर्शन करके जा रहे हैं। एक धनश्री नाम की महिला अंत में आती है। पूतिगंधा पूजन के बाद शास्त्र भवन में बैठती है और शास्त्र खोलने लगती हैं।

**धनश्री**—गंधा! आज तुम्हें पूजन में इतनी देर कैसे हो गई ? पहले तो तुम कभी पूजन ही नहीं करती थीं और आज बारह बजा दिये ?

**गंधा**—बहन! तूने इतनी देर क्यों कर दी ? तू तो बहुत ही जल्दी दर्शन कर जाती थी ?

**धनश्री—**(गुस्से में) आज मेरे पति दो ब्रह्मचारियों को उठा लाये, बोले उन को जिमाओ। क्या बताऊँ बहन! नाक में दम आ रही है, कोई मुनियों का संघ आया हुआ है बस कहते हैं कि रोज आहार देना है टाइम पर आकर पड़गाहन के लिए खड़े हो जाते हैं। मेरा तो जी जल जाता है काम करते-करते मैं हार जाती हूँ। बस इसीलिए तो आज देरी हो गयी।

**गंधा—**(करुणा से) अरे बहन! तू ऐसा मत बोल! हाय! मुनियों के प्रति दुर्भाव का मैंने कैसा फल भोगा है यदि तू सुनेगी तो रो पड़ेगी। यदि मैं याद कर लेती हूँ तो मेरा सारा शरीर कांपने लगता है (काँपते हुए) हाय-हाय, मुनि निंदा का फलबहुत ही कडुवा मिलता है और उनकी भक्ति अनंत पापों को क्षणमात्र में नष्ट कर देतीहै।

**धनश्री—**(कौतुक से) अच्छा! तो बहन, सुनाओ-सुनाओ। मुझे अपनी कथा जल्दी सुनाओ।

**गंधा—**सुनो बहन! एकाग्रचित्त होकर सुनो (दोनों ही सामने का शास्त्र बंद कर देती हैं।) सौराष्ट्र देश के गिरिनगर में राजा भूपाल के राजश्रेष्ठी का नाम गंगदत्त था, मैं उनकी प्यारी सिंधुमती सेठानी थी। उस समय मुझे अपने रूप-यौवन और वैभव का अत्यधिक अभिमान था। एक दिन पति के साथ बसंत-विहार हेतु जाते समय एक मुनि हमारे महल की तरफ आ रहे थे सो उन्हें देखकर मेरे पति ने जबरदस्ती मुझे उन्हें आहार देने हेतु भेज दिया। मैंने क्रोध में उन्हें कडुवी तूमड़ी का आहार करा दिया। जिससे वे स्वर्गस्थ हो गये तब राजा ने मुझे दंडित करके देश से निकाल दिया मैं वन में पहुँची मुझे दूसरे दिन ही भयंकर कुष्ट फूट निकला। बड़ी भयंकर वेदना भोगकर अतीव संक्लेश परिणाम से मैं मरी और छठे नरक में बाईस सागर की आयु लेकर जन्म ले लिया.....।

**धनश्री—**(दुखित होती हुई) हाय रे! वहाँ के दुःख कैसे भोगे ? और कहीं सातवें नरक चली जाती तो ?

**पूतिगंधा—**बहन! स्त्री पर्याय से मरकर सातवें नरक नहीं जा सकते क्योंकि उन्हें उत्तम संहनन नहीं रहता है। मैंने वहाँ छठे नरक में भी जो दुःख भोगे हैं उनको असंख्य जिह्वा से भी मैं नहीं कह सकती। पुनः वहां से निकलकर क्रूर पशु हुई फिर नरक गई, ऐसे कई बार नरकों में जा-जाकर बहुत ही दुःख भोगे हैं। पुनः कुछ पाप मंद होने से तिर्यंचयोनि में भटकती रही। वहाँ पर भी दो बार कुत्ती हुई, फिरसूकरी हुई, फिर सियारनी हुई, फिर चुहिया हुई, फिर जोंक हुई पुनः हथिनी हो गई पुनः गधी हो गई, फिर गोह हो गई। हाय! हाय! मैंने इन तिर्यंचयोनियों में कैसे-कैसे कष्ट सहे हैं ? कैसे कहूं ? और क्या कहूँ.... ? बहन! पुनः जब पाप बहुत कुछ हल्का



हो गया, तब मैं इसी हस्तिनापुर के राजश्रेष्ठी धनमित्र की पुत्री हुई किन्तु यँहापर भी अभी पाप का फल भोगना शेष था। मेरे शरीर से ऐसी दुर्गंध निकलती थी कि जैसे कुष्ट रोग से गलित और मरे हुए कुत्ते के कलेवर से दुर्गंध निकलती है।मेरे पास कोई भी खड़ा नहीं हो सकता था। मेरे पिता ने जैसे-तैसे प्रयत्न करके यहीं के सेठ वसुमित्र के पुत्र श्रीषेण के साथ विवाह भी कर दिया लेकिन मेरे पति एक रात में ही मेरी दुर्गंधि से घबड़ाकर कहीं भाग गये।

मैं पुनः पीहर में आकर अपने किये का फल भोग रही थी कि अकस्मात् एक दिन उस शहर के उद्यान में अमितास्रव और पिहितास्रव नाम के चारण युगल मुनि पधारे। राजा लोग बड़ी भक्ति से वंदना करने गये थे और मैं भी अपने परिवार के साथ वहाँ पहुँची। दर्शन-पूजन के अनंतर गुरु का उपदेश हुआ, अनंतर समय पाकर मैंने महामुनि से निवेदन किया कि हे भगवन्! मैंने कौन-सा ऐसा पाप किया है कि जिससे मेरा शरीर ऐसा दुर्गन्धित हो रहा है। मुनिराज दिव्य मनःपर्ययज्ञान के धारी थे अतः परमकारुणिक बुद्धि से उन्होंने सिंधुमती से लेकर इस पर्याय तक के सारे भव-भवांतर सुना दिये। मैं काँप गई और रुदन करने लगी। गुरुदेव ने समझाया कि बेटी! तू अब शोक मत कर। अब दुःख के छूटने का उपाय कर। मैंने निवेदन किया कि हे प्रभो! किस उपाय से मेरा यह संकट दूर होगा ? तब उन्होंने मुझे जैनधर्म का स्वरूप समझाया और रोहिणी व्रत करने के लिए कहा। मैंने विधिवत् गुरु के पास वह व्रत ग्रहण कर लिया। विधिवत् उसका अनुष्ठान करते हुए आज मेरे व्रत का अंतिम दिन है, व्रत के दिन मैं दिन भर और रात में भी मंदिर जी में ही रहती हूँ।

**धनश्री—**ओहो! आपने आज करुणा से भरी हुई आश्चर्यकारी घटना सुनाई। क्या बहन! आपने सचमुच में नारकीय, पाशवीय यातनाएँ भोगी हैं ? हाय हाय! मेरा तो सुनकर हृदय काँप रहा है। आपने सहन कैसे किया ? (आँखों के अश्रु पोंछने लगती है)

**गंधा—**सखी! मैं तुम्हें क्या बताऊँ, जिस दिन से महामुनि के मुख से मैंने अपने पूर्वभव सुने हैं, उस दिन से मेरे परिणाम बहुत ही शांत हो गये हैं। साधुओं की तो क्या, मैं अब किसी निंदनीय की भी निंदा नहीं करती हूँ और न सुनती ही हूँ। यदि कोई किसी की निंदा, किसी का अपमान या तिरस्कार करता है तो मैं उसे अपना इतिहास सुनाकर उसे उस कार्य से विरत कर देती हूँ।

**धनश्री—**बहन! आज मैं जिनेन्द्रदेव के सम्मुख यह प्रतिज्ञा करती हूँ कि कभी भी साधु-साध्वी, ब्रह्मचारी या ब्रह्मचारिणी की निंदा नहीं करूँगी, न सुनूँगी

प्रत्युत् उन्हें आदरभाव से आहारदान आदि देकर उनकी सेवा भक्ति करूँगी तथा कोई कैसा भी निन्दनीय हो मैं उसकी निंदा नहीं करूँगी।

**गंधा—**(प्रसन्न होकर) बहुत अच्छा किया। बहन! आज मुझे बहुत खुशी हुई।

**धनश्री—**अब आप मुझे यह भी बताइए कि रोहिणीव्रत की विधि क्या है ?

**गंधा—**जिस दिन चंद्रमा रोहिणी नक्षत्र में स्थित हो, उसके पहले दिन शाम को गुरु के पास जाकर चार प्रकार के आहार का त्याग करके उपवास ग्रहण कर लेवे और जिस दिन रोहिणी नक्षत्र है उस दिन प्रातः शुचिर्भूत होकर अष्टद्रव्य की सामग्री लेकर जिनमंदिर में भगवान वासुपूज्य की अभिषेकपूर्वक पूजाविधि सम्पन्न करके जाप करे। दिन भर स्वाध्याय, धर्मचर्चा आदि में समय बिताकर रात्रि में भी धर्मध्यान करते हुए जागरण करे। यह रोहिणी नक्षत्र सत्ताइसवें दिन में आता है। उस दिन इसी विधि से उपवास किया जाता है। इस व्रत में पाँच वर्ष नौ दिन में सरसठ उपवास होते हैं। उद्यापन करके अंत में शक्तिप्रमाण उद्यापन विधि करना चाहिए।

**धनश्री—**यह व्रत मुझे भी दिला दो।

**गंधा—**हाँ, हाँ, चलो बहन! तुम्हें मुनिराज के पास यह व्रत दिला दूँगी।

(दोनों चली जाती हैं)

*(पटाक्षेप)*

(सिंहपुर के राजा सिंहसेन की रानी का नाम कनकप्रभा था। इनके एक पुत्र हुआ जिसके शरीर से बहुत ही दुर्गंध निकल रही थी और उसका नाम पूतिगंध रख दिया। एक दिन विमलवाहन भगवान को केवलज्ञान होने पर आकाश से देवों का आगमन होता देख पूतिगंध मूर्च्छित हो गया। अनेकों उपचार से होश आने पर उसे जातिस्मरण हो गया। पिता के आग्रह से उसने सारी आत्मकथा सुनाई। अनंतर समवसरण में जाकर दिव्य उपदेश सुनकर भगवान से रोहिणी व्रत ग्रहण किया। तब उसका शरीर दिव्य सुगन्धित हो गया। पिता के राज्य को सम्भाल कर अंत में उसने सल्लेखनामरण कर स्वर्ग प्राप्त किया।)

## दृश्य पंचम

**समय—**प्रातःकाल

**स्थान—**राजमहल

| | |
|---|---|
| 1. सिंहसेन | सिंहपुर नरेश |
| 2. कनकप्रभा | सिंहपुर रानी |
| 3. पूतिगंध | राजकुमार |



| | |
|---|---|
| 4. धाय | |
| 5. चम्पा | दासी |
| 6. वनपाल | |
| 7. स्मृति | |
| 8. ईहा | |

(राजकुमार मूर्च्छित हो जाता है तब धाय दौड़कर संभालती है और महाराजा आदि को बुलाने के लिए कहती है। कुछ लोग शीतोपचार में लग जाते हैं।)

**धाय—**अरी चंपा! जल्दी दौड़, महाराजा साहब को और महारानी जी को सूचना दे दे कि कुमार मूर्च्छित हो गये हैं।

**चंपा—**हाँ, हाँ, मैं जा रही हूँ। (चली जाती है)

(चंपा के साथ महाराज और महारानी प्रवेश करते हैं।)

**राजा—**अरे-अरे! यह क्या हुआ ? (घबराते हुए कुमार को संभालते हैं)

**रानी—**(शोकार्त होकर) क्या कारण हुआ ? आह....बेटा! तुझे क्या हो गया है ? बोल तो सही। (पास बैठ जाती है) महाराज! अब क्या करना ?

**राजा—**देवी! तुम इतना मत घबड़ाओ ? कुमार को मूर्च्छा आ गयी है शीतोपचार चल रहा है अभी होश आने पर स्थिति स्पष्ट हो जावेगी।

**रानी—**(दुःखित स्वर से) जब से इसने जन्म लिया है न मुझे शांति है न इसको ही। हाय! पता नहीं मेरे कौन से कर्मों का उदय अपना फल दे रहा है।

**राजा—**देवि! तुम्हारे कर्मों का इसमें क्या दोष है ? अरे! उसने ही कुछ पूर्वजन्म में पापकर्म संचित किया होगा जिससे उसको ऐसा दुर्गंधित शरीर मिला है। इसके लिए तुम क्यों सोच रही हो ? मैंने उपचार में आज तक कोई कमी नहीं रखी, कोई वैद्य नहीं छोड़े और न कोई सुगंधित चूर्ण ही उसके शरीर में लेप करने को छोड़ा है किन्तु फिर भी जब उसकी दुर्गंधि दूर नहीं होती तो क्या करूँ?

**रानी—**हाय! मुझे यहाँ बैठना ही मुश्किल हो रहा है क्या करूँ ?

**राजा—**तुम चलो, मैं संभाल तो रहा हूँ।

**रानी—**कैसे चली जाऊँ ? अपना जन्म दिया हुआ बेटा। जी तो नहीं मानता है।

(कुमार को होश आ जाता है और वह उठकर चिंतित मुद्रा में बैठ जाता है)

**राजा—**बेटा! क्या बात है ? अब ठीक है, बोलो, तुम्हें मूर्च्छा क्यों आ गई थी ? क्या किसी का स्मरण हो आया ? या और कोई बात है ?

**पूतिगंध—**मैं क्या कह दूँ पिताजी ? (रो पड़ता है)

**राजा**—बोलो बेटा, बोलो! ऐसा क्यों कहते हो ?

(आँसू पोंछने लगते हैं और मस्तक पर हाथ फेरते हैं।)

**पूतिगंध**—आकाश से देवों के विमान जा रहे थे, वे जय-जयकार कर रहे थे कि अकस्मात् मैं मूर्च्छित हो गया और अब मुझे एकदम अपने कई भवों का जातिस्मरण हो आया है।

**राजा**—(विस्मय से) जातिस्मरण ? तो तुम चिंता क्यों करते हो कुमार! जो बीत गई सो बीत गई। अब तुम्हें क्या कमी है ? पुत्र! तुम रुदन क्यों कर रहे हो ? बताओ तो सही, आखिर तुम्हें क्या-क्या स्मरण हुआ है ?

**रानी**—(अपने आंचल से पुत्र के आँसू पोंछते हुए) रोओ नहीं बेटा! तुम इतने बड़े राजाधिराज के पुत्र हो, क्यों दुःखी होते हो ? अपना जातिस्मरण मुझे भी सुनाओ।

**पूतिगंध**—मातः! मेरा इतिहास बड़ा ही विचित्र है। माँ क्या कहूँ और कैसे कहूँ। मुझे कहते हुए भी लज्जा आती है।

**रानी**—नहीं बेटा! हम लोगों के सामने तुम्हें कोई भी बात कहने में संकोच क्यों ? कहो-कहो। कह देने से तुम्हारा मन भी हल्का हो जायेगा।

**पूतिगंध**—पूर्व जन्मों में मैंने बहुत पाप किये हैं और उनका फल भी मैंने ओह! (दीर्घ निःश्वास लेकर) कितने दुःख भोगे हैं ? क्या कहूँ.....

**राजा**—बेटा! तुम समझदार हो। ऐसा शोक नहीं करना चाहिए। बोलो तो सही, आखिर तुम्हें क्या स्मरण हुआ है ?

**पूतिगंध**—(कुछ शांत होकर) सुनो! यदि आप लोगों की इच्छा है तो मैं भी इतिहास सुनाता हूँ।

कनकपुर के राजा सोमप्रभ के यहाँ मेरा भाई सोमदत्त पुरोहित पद पर आसीन था। मैंने उसकी भार्या के साथ दुराचार किया। जब मेरे भाई को यह पता चला, तब उसने दिगम्बर दीक्षा ले ली। उस समय राजा ने मुझ सोमशर्मा को पुरोहित पद दे दिया। एक दिन महाराज ने शकट देश के राजा पर चढ़ाई करने के लिए प्रस्थान किया। मार्ग में वे ही मुनि मिले मैंने उनके दर्शन का फल अपशकुन बताया तब अन्य निमित्तज्ञ ने आकर उसका फल उत्तम बताकर राजा को सन्तुष्ट कर दिया। मैंने क्रोध में आकर मुनि को मार डाला। राजा ने इस अपराध से मुझे दंडित कर निकाल दिया। मेरे कुष्ट रोग फूट निकला। (दीर्घ निःश्वास लेकर) ओह! पिताजी! मैं मरकर सातवें नरक में चला गया। वहाँ की घोर वेदना... स्मरण करते ही कलेजा फटने लगता है।



वहाँ पर मैंने तैंतीस सागर तक समय निकाला। वहाँ से निकलकर स्वयंभू-रमणसमुद्र में चार हजार कोश विस्तृत शरीर वाला महामत्स्य हो गया। वहाँ के दुःख भोगकर फिर मरकर छठे नरक में चला गया, वहाँ की बाईस सागर की आयु भोगकर जैसे-तैसे निकला तो यहाँ पर सिंह हो गया। अरे रे! खूब हाथियों को और हिरणों को मार-मार कर खाया और फिर मरकर पाँचवें नरक में पहुँच गया। वहाँ की आयु भोगकर निकलकर सर्प हो गया। सर्प की पर्याय पूरी कर चौथे नरक में चला गया, वहाँ से निकलकर व्याघ्र हो गया। पुनः मरकर तीसरे नरक में चला गया। वहाँ से निकलकर दुष्ट पक्षी हो गया, पुनः पाप के फल से दूसरे नरक में चला गया। वहाँ से निकलकर बगुला हो गया। खूब मछलियों को खाया और उस पाप के फल से पुनः पहले नरक में चला गया और वहाँ पर एक सागर की आयुपर्यंत दुःख भोगता रहा (काँपने लगता है)।

पूज्य पिता! फिर कुछ पाप कर्म के हल्के हो जाने से मैंने यह मनुष्य पर्याय पायी है और आपके घर में जन्म लिया है। यहाँ पर भी अभी कुछ पाप शेष रहा था कि जिसके फलस्वरूप यह दुर्गन्धित शरीर मिला है। यदि मैंने सुकृत किया होता तो देवों के विमान में जन्म लेकर स्वर्ग के सुखों का अनुभव करता किन्तु पाप से नरकगति और तिर्यंचगति ही मिलती है।

**राजा**—(खेद और आश्चर्य से) बेटा! संसार की स्थिति बड़ी विचित्र है। यह जीव अनादिकाल से न जाने क्या-क्या करता आया है और न जाने कैसे-कैसे दुःख भोगता आया है! अब शोक छोड़ो। (बीच में वनपाल आता है)

**वनपाल**—(नमस्कार करके) महाराज की जय हो (सामने छहों ऋतुओं के फल-फूलों को रखकर) महाराज! आपके पुण्योदय से भगवान विमलवाहन को केवलज्ञान हो गया है और देवों ने आकर समवसरण की रचना कर दी जो कि अपने शहर के उत्तर के उद्यान में स्थित है।

(राजा-रानी आदि सभी उठकर उत्तर दिशा की तरफ सात पैंड चलकर 3 बार नमोस्तु कहकर पंचांग नमस्कार करते हैं।)

**राजा**—जय हो, जय हो! विमलवाहन भगवान की जय हो (हर्ष से विभोर होकर) मंत्री! शहर में घोषणा कर दो। सभी लोग भगवान की वंदना के लिए चलें (पुत्र की तरफ देखकर) उठो बेटा, चलो, अपने महान पुण्योदय से भगवान का आगमन हुआ है उन्हीं के पास तुम्हारे शोक दूर करने का उपाय पूछेंगे।

**पूतिगंध**—हाँ-हाँ पिताजी, चलिये। भगवान के चरण सानिध्य में ही मैं अपने पूर्वभवों को पूर्णतया स्पष्ट करके और अपनी इस दुर्गंधि से छूटने का उपाय पूछूँगा।

(सभी चले जाते हैं। स्मृति और ईहा प्रवेश करती हैं)

**ईहा—**सखी! बहुत दिन हो गये, आपने कोई नई बात नहीं सुनाई। आज जरुर सुनाइये।

**स्मृति—**हाँ-हाँ सखी! मैं सुनाने के लिए ही तो आई हूँ। बहुत शुभ समाचार सुनाऊँगी।

**ईहा—**(उत्सुकता से) हाँ तो जल्दी सुनाइये।

**स्मृति—**सखी! अपने शहर के उद्यान में भगवान विमलवाहन को केवलज्ञान प्रकट हुआ है अतः इंद्रों की आज्ञा से रचित समवसरण में प्रभु विराजमान हैं।

**ईहा—**आपने दर्शन किया ?

**स्मृति—**हाँ-हाँ, मैंने प्रत्यक्ष में दर्शन किया है। भगवान का अतिशय महान है। वहाँ पर अपने महाराज सिंहसेन और महारानी कनकप्रभाजी भी अपने पुत्र पूतिगंध के साथ गये थे।

**ईहा—**अच्छा! तो राजकुमार ने अपने दुर्गंधि का कारण पूछा होगा।

**स्मृति—**हाँ सखी! पहले तो उसे देवों के आगमन को देखते ही जातिस्मरण हो गया था। उसने पिता के आग्रह से अपने सारे भव-भवांतर सुना दिये। अनंतर भगवान के समवसरण में पहुँचकर पुनः उसने अपने सारे भव प्रभु की दिव्यध्वनि से श्रवण किये और अपने बचे हुए पाप को हल्का करने के लिए उसने उपाय पूछा।

**ईहा—**तो भगवान ने क्या बताया ?

**स्मृति—**भगवान ने बताया कि तुम इस पाप को नष्ट करने के लिए रोहिणी व्रत करो और कुमार ने अतीव भक्ति के साथ व्रत ग्रहण कर लिया। तब प्रभु के पादमूल में उसने सम्यक्त्व सहित पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत इन बारह व्रतों को भी ग्रहण कर लिया। उसने विधिवत् रोहिणी व्रतों को करना प्रारंभ कर दिया है। यह व्रत अभी पूरा नहीं हुआ और उसके शरीर से दुर्गंधि कहाँ को पलायमान हो गई पता ही नहीं है, बल्कि उसका सारा शरीर अतीव सुगन्धित हो गया है। इसलिए अब सभी लोग उसे सुगंध कुमार कहते हैं।

राजा ने धर्म के माहात्म्य को प्रत्यक्ष देखकर अपने पुत्र सुगंध कुमार का राज्याभिषेक कर दिया है और आप स्वयं आत्मकल्याण में तत्पर हो गये हैं। आजकल महाराज सुगंध कुमार न्यायनीति से प्रजा का पालन करते हुए निरंतर धर्मकार्य में अपना काल यापन कर रहे हैं।

**ईहा—**अच्छा, रोहिणी व्रत का बड़ा माहात्म्य है!

**स्मृति—**हाँ सखी! यह व्रत संपूर्ण शोक को नष्ट करने वाला है।

(दोनों चली जाती हैं।)



# तृतीय स्तम्भ

(हस्तिनापुर नरेश महाराजा अशोक और रानी रोहिणी के आठ पुत्र तथा चार पुत्रियाँ थीं। एक समय राजा अपनी रानी के साथ महल की छत पर बैठे हुए शहर की शोभा देख रहे थे तथा पास में बसंततिलका धाय भी छोटे बालक लोकपाल को गोद में लिए हुए थी। अकस्मात् कुछ महिलाएँ गली से रोती हुई निकलीं। रानी ने कौतुक से पूछा कि ये कौन-सी नृत्य कला है। ''यह शोक से रोना है'' ऐसा धाय के द्वारा समझाये जाने पर भी जब वह नहीं समझ सकी तब महाराजा ने स्वयं लोकपाल को उठाकर छत से नीचे डाल दिया। एक क्षण में ही देवताओं ने बालक को सिंहासन पर बिठाकर उसका लालन किया। यह दृश्य देख अशोक महाराज विस्मय में पड़ गये कि इस रोहिणी के कितने विशेष पुण्य का उदय है कि ''शोक क्या है ?'' यह मालूम नहीं हो रहा है। अस्तु! मुनिराज के पास में राजा ने अपने व रोहिणी के भवांतर पूछे जिसमें 'रोहिणीव्रत' के महत्त्व को सुनकर अतीव प्रसन्न हुए। सो ही देखिये–)

## दृश्य षष्ठम

**समय—**मध्यान्ह

**स्थान—**राजमहल

| | |
|---|---|
| 1. महाराज अशोक | हस्तिनापुर नरेश |
| 2. रोहिणी | महादेवी |
| 3. धाय | |
| 4. लोकपाल | राजा का शिशु |
| 5. महिला वर्ग | दुःखियारी |
| 6. देवियाँ | |

(महाराज अशोक महारानी को शहर की शोभा दिखा रहे हैं और धाय बालक को प्यार कर रही है)

**महाराज—**देखो प्रिये! सामने जो ध्वजायें फहरा रही हैं वे भी जिनमंदिर की हैं। इस शहर के बीचोंबीच में यह जिनमंदिर सबसे उन्नत और विशाल है। इसके मध्य का शिखर मानों स्वर्ग लोक के देवों को बुलाने के लिए ही मस्तक उठा रहा है और उस पर फहराती हुई ध्वजा मानों दर्शकों के पापधूलि को साफ कर रही है। देखो न, इस मंदिर पर हजारों शिखर हैं और उन सभी पर ध्वजायें लहरा रही हैं।

**रानी—**स्वामिन्! मैंने मुनियों के मुखारविंद से सुना है कि जिस शहर में मंदिर का शिखर सबसे अधिक ऊँचा होता है वहाँ पर हमेशा उन्नति ही उन्नति हुआ करती है।

**राजा—**हाँ हाँ, यह बात तो बिल्कुल सच है तभी तो अपना हस्तिनापुर नगर सर्वतोमुखी उन्नति को कर रहा है और (अंगुली से दिखाते हुए) इधर देखो, ये सभी हवेलियाँ अपने शहर के जौहरियों की हैं जो एक से एक बढ़कर हैं।.....

(इसी बीच में बालक लोकपाल कभी पिता की गोद में आता है तो कभी माता की गोद से कंधे पर चढ़ने लगता है। कभी पिता के मस्तक के मुकुट को उतारना चाहता है तो पुनः धाय उसे पकड़कर गोद में लेती है)

**रानी—**यह बालक कितना चंचल है, देखो न, आपके मस्तक से मुकुट को ही उतार रहा है (हँसकर) ऐसा लगता है कि मानों यही आपका उत्तराधिकारी बनेगा।

**राजा—**महारानी जी! यह तो उसकी बालसुलभ चेष्टा है भला ऐसा भी कभी कहीं हो सकता है। अरे! आपके बड़े सातों पुत्रों में तो सभी एक से एक बढ़कर ही हैं। सबसे बड़े 'युवराज वीतशोक' जो कि आज बहुत ही प्रौढ़ दिख रहे हैं क्या वे बचपन में कम चंचल थे ?

**रानी—**(लोकपाल का गाल चूमकर कहती हैं) क्यों कुमार ? क्या तुम पिताजी के राज्य भार को सम्भालोगे ? (बालक खिलखिलाकर हँस पड़ता है सभी हँसने लगते हैं।)

(नीचे मार्ग में कुछ महिलाएँ बाल बिखेरे हुए छाती कूट-कूट कर रोती हुई आ रही हैं।)

**रानी—**(अतीव आश्चर्य से) ओहो!....यह कौन सी नृत्य कला है ? (धाय से) अरी माँ! तू देख तो सही, ये कैसा नाटक है ? मुझे नृत्यकला के विद्वानों ने सिग्नटक, भानी, छत्र, रास और दुम्बिली ऐसे पाँच तरह के नृत्य सिखाये हैं और उन्होंने बताया है कि भरत महाराजा के द्वारा कहे गये ये नृत्य पाँच प्रकार के होते हैं। पुनः इन महिलाओं का यह "सादिकुट्टन' नृत्य कौन सा है ? इसमें तो सात स्वर भी नहीं हैं। भाषा और मूर्च्छनायें भी नहीं हैं। भला यह कौन सी नृत्य कला है ?

**धाय—**(प्रेम से समझाते हुए) बेटी! यह नृत्य कला नहीं है। यह शोक है, यह दुखीजनों द्वारा महादुख के समय किया जाता है।

**रानी—**(कौतुक भाव से) हे माँ, शोक किसे कहते हैं ? अथवा दुःख क्या है तू मुझे बता ?

**धाय—**(क्रोध में आकर) अरे! क्या तुझे उन्माद हो गया है अथवा पांडित्य या ऐश्वर्य का मद चढ़ रहा है ? या तुझे अपने रूप और सौभाग्य का अतीव घमंड



हो रहा है ? कि जिससे तू इस शोक को नाटक कह रही है और शोक तथा दुःख की परिभाषा भी नहीं समझ रही है।

**रानी—**भद्रे! तुम मेरे ऊपर क्रोध मत करो। गंधर्वों के द्वारा बताये गये अनेक चित्रों को, अक्षरों और स्वरों को, चौंसठ प्रकार के विज्ञानों को और बहत्तर प्रकार की कलाओं को मैंने सीखा है किन्तु मुझे किसी विद्वान् ने भी ऐसी नृत्य कला नहीं बताई है। मैंने न कभी ऐसा देखा ही है और न सुना ही है इसीलिए मैं आपसे पूछ रही हूँ।

**धाय—**रानी! न यह नाटक का प्रसंग है और न गीतभाषा का ही स्वर है किन्तु अपने बंधु की मृत्यु हो जाने से अत्यन्त दुःख से दुखित हो रोते हुए प्राणियों का यह शोक है। हे वत्से! इसे शोक कहते हैं ऐसा तू समझ।

**रानी—**हे भद्रे! मैं रोने का अर्थ नहीं समझती हूँ। तुम पुनः मुझे समझाओ।

**धाय—**जब अपने हृदय में वेदना उत्पन्न होती है तब आँखों से आँसू बहने लगते हैं उसे ही रोना कहते हैं।

**रानी—**माँ! आँखों में आँसू अपने आप कैसे आते हैं ?

**धाय—**जब अंतरंग में शोक उमड़ता है तब आँसू आने लगते हैं।

**रानी—**शोक कैसे उत्पन्न होता है, पुनः मुझे समझाओ। मुझे अतीव कौतुक हो रहा है कि आखिर यह कौन सी कला है ?

**धाय—**बेटी! यह कला नहीं है यह पीड़ा से उत्पन्न हुआ करुण क्रन्दन है।

(राजा आश्चर्य से रानी के मुख की तरफ एकटक देख रहे हैं।)

**रानी—**माते! पीड़ा किसे कहते हैं और करुण क्रन्दन किसका नाम है ?

**धाय—**(पुनः चिढ़कर) क्या बताऊँ तुझे, और कैसे समझाऊँ ? (कुछ सोचने लगती है) बेटी! जब घर में कोई मर जाता है या कहीं और कुछ निमित्त से अपना अनिष्ट हो जाता है तो उस समय हृदय में बहुत गहरी चोट पहुँचती है, उस समय शोक उत्पन्न हो जाता है और रोना आने लगता है। पुनः जब शोक अतीव मात्रा में पहुँच जाता है तब यह प्राणी छाती कूट-कूट कर बिलख-बिलख कर रोने लगता है, वह बेभान हो जाता है उसी का नाम करुण क्रन्दन है। अब कुछ समझ में आया ?

**रानी—**मुझे अभी तक यह नहीं समझ आया कि रोना किसे कहते हैं ? (समझ में न आने से खिन्न हो उठती है)

**राजा—**(आवेश में धाय की गोद से बालक को छीनते हुए) हाँ देखिए! रोने

का अर्थ मैं अभी समझाए देता हूँ। (बालक को सात मंजिल की छत से एकदम नीचे छोड़ देते हैं।)

(दूसरे क्षण ही रानी के साथ राजा जब नीचे दृष्टि डालते हैं तब क्या देखते हैं कि अशोक वृक्ष के अनुभाग पर दिव्य सिंहासन पर बालक विराजमान है और देवियाँ कार्य में व्यस्त हैं। बालक को अभिषेक कराकर दिव्य वस्त्रालंकार से सुसज्जित कर रही हैं। कुछ देवियाँ चमर ढोर रही हैं, कुछ देवियाँ ''जैनधर्म की जय-जयकार'' से आकाश को गुँजा रही हैं। महादेवी रोहिणी, महाराजा अशोक और बसंततिलका आश्चर्यसागर में निमग्न हो कुछ क्षण के लिए अपने को ही भूल जाते हैं और अनुपम दृश्य देखते रह जाते हैं)

**राजा—**(आश्चर्य पूर्ण स्वर से) ओहो! प्रियतमे! तुम्हारा पुण्य अद्‌भुत है कि जिससे देवताओं ने तुम्हें रोना किसे कहते हैं ? शोक क्या है ? अर्थ समझाने ही नहीं दिया प्रत्युत् बीच में ही आकर उन्होंने अमंगल को भी मंगल कर दिया। दुःख को आने ही नहीं दिया। ऐसा लगता है कि तुमने पूर्व जन्म में कोई विशेष ही पुण्य संचित किया है।

**धाय—**महाराज! आपका कहना बिल्कुल सत्य है। अवश्यमेव महारानी जी ने कोई खास ही धर्मानुष्ठान किया होगा अन्यथा ऐसा चमत्कार कैसे होता ?

**राजा—**हाँ, सच है! धर्म का माहात्म्य अचिन्त्य है उसके प्रभाव से सर्प भी रत्नहार हो जाता है, अग्नि भी शीतल जल हो जाती है, विष भी अमृत हो जाता है, आकाश से रत्नों की वर्षा होने लगती है। और देखो न, साक्षात् देव-देवियाँ भी किंकर बन जाते हैं।

**धाय—**धन्य हो महादेवि! धन्य हो, आपका भाग्य अलौकिक है।

(इसी बीच वे देवियाँ बालक को सजा रही हैं। चारों तरफ से भीड़ उमड़ती चली आ रही है 'महाराजा अशोक की जय, महादेवी रोहिणी की जय, कुमार लोकपाल की जय, इत्यादि जयकारों की ध्वनि से जनता आकाशमंडल को गुंजा देती है। अनंतर देवतागण पुत्र लोकपाल को लाकर महाराजा अशोक को सौंप देते हैं। बालक खिलखिलाकर हंस रहा है।)

*(पटाक्षेप)*

(महाराज अशोक उद्यान के जिनमंदिर में आये हुए चारण मुनि के दर्शन करके अपनी रानी के 'शोक और दुःख' न समझने का कारण पूछते हैं। तब रूप्यकुम्भ मुनिराज पूर्व भव का सारा वर्णन सुनाते हैं। अनंतर महाराज प्रसन्नमना



राज्य संचालन करते हुए एक दिन विरक्त होकर भगवान के समवसरण में पहुँच जाते हैं। दीक्षा लेकर भगवान के गणधर हो जाते हैं। रोहिणी भी दीक्षा लेकर अच्युत स्वर्ग में इंद्रपद प्राप्त कर लेती हैं। इस इतिहास से रोहिणी व्रत का माहात्म्य आज तक चला आ रहा है और भविष्य में रोहिणी नक्षत्र रहने तक चलता ही रहेगा।)

## दृश्य सप्तम

| | |
|---|---|
| 1. राजा अशोक | हस्तिनापुर नरेश |
| 2. रोहिणी | रानी |
| 3. राजपुत्र | आठों ही |
| 4. मंत्री | |
| 5. ज्योतिषी | |
| 6. वनपाल | |
| 7. स्मृति | कन्या |
| 8. ईहा | कन्या |
| 9. नागरिक गण | |

(स्मृति और ईहा प्रवेश करती हैं)

**ईहा—**सखी! कुछ नई बात सुनाओ।

**स्मृति—**हाँ सखी! बहुत बढ़िया बात सुनाने की है और मैं कई दिन से तुम से मिलना चाह रही थी।

**ईहा—**तो सखी, जल्दी सुनाओ।

**स्मृति—**महाराजा अशोक ने अपने शिशु लोकपाल को सात मंजिल वाली छत से नीचे फेंक दिया था सो तो तुम्हें मालूम ही है।

**ईहा—**हाँ-हाँ, रोहिणी महादेवी को 'रोना किसे कहते हैं ?' यह समझाने के लिए न।

**स्मृति—**हाँ, उसके बाद उद्यान में रूप्यकुंभ और सुवर्णकुंभ नामक दो चारण मुनि पधारे। महाराज ने परिजन और पुरजन के साथ उनकी वंदना करके उनसे अपनी प्रिया रानी रोहिणी व अपने भवांतर पूछे। तब मुनिराज ने कहा कि—उस रोहिणी ने कितने ही भव पूर्व सौराष्ट्र देश के गिरिनगर में राजश्रेष्ठी की सेठानी अवस्था में मासोपवासी महामुनि को कटुक तूमड़ी आहार में देकर उनको स्वर्गलोक पहुँचा दिया था। उसके फलस्वरूप कई भवों तक नरक और तिर्यंच व

दुःख भोगती रही, पुनः हस्तिनापुर नरेश के राजश्रेष्ठी की कन्या हुई जिसके शरीर से दुर्गन्धि निकल रही थी। आर्यिकाजी को आहारदान देकर कुछ पुण्य संचितकिया पुनः मुनि के उपदेश से पिछले भव सुनकर दुःखों की शांति के लिए रोहिणीव्रत ग्रहण किया। अंत में समाधि से मरणकर अच्युत स्वर्ग में इंद्र हो महादेवी हो गई। वहाँ से चलकर चंपापुर के महाराजा मघवा की पुत्री रोहिणी हुई है। जिसने कि स्वयंवर में अपने महाराजा अशोक को वरमाला डालकर वरण किया है। आज रोहिणी जी के आठ पुत्र और चार पुत्रियाँ हैं। अका इतना असीम पुण्य है कि वह 'रोना क्या है ?' सो भी नहीं समझ पाती हैं। यह बस रोहिणी व्रत का माहात्म्य है।

**ईहा**—पुनः अशोक महाराजा के क्या भव सुनाये ?

**स्मृति**—हाँ, वे भी सुनो। कनकपुर क्षेत्र के पुरोहित सोमदत्त के बड़े भाई ने अपनी छोटी भावज से व्यभिचार किया। पुनः सोमदत्त के मुनि हो जाने पर एक दिन कुछ कारण बनाकर उनकी हत्या कर डाली। अनंतर राजदंड पाकर कुष्ठ रोग से गलित होकर नरकों और तिर्यंचों के दुःख भोगता रहा। कदाचित् पाप के हल्के हो जाने से सिंहपुर के राजा सिंहसेन का पुत्र हुआ, जिसके शरीर से अतीव दुर्गन्धि निकल रही थी। उसका नाम पूतिगंध रखा गया। एक समय उस राजपुत्र ने पूर्व भवों के जातिस्मरण से उपशम भाव को प्राप्त होकर विमलवाहन भगवान की वंदना की तथा उनसे अपने तमाम पूर्व भवों को सुनकर जैनधर्म धारण कर लिया। पश्चात् दुःख की शांति के लिए भगवान के दिव्य उपदेश से रोहिणी व्रत ग्रहण कर लिया तथा विधिवत् व्रत का पालनकर अंत में मरण कर प्राणत नामक चौदहवें स्वर्ग में महान् ऋद्धिधारी देव का वैभव प्राप्त किया। अनंतर वहाँ से च्युत होकर पूर्व विदेह क्षेत्र की पुंडरीकिणी नगरी में राजा विमलकीर्ति की महारानी श्रीमती से जन्म लेकर अर्ककीर्ति नाम का प्रसिद्ध पुत्र हुआ। उसने यौवनकाल में चक्ररत्न, छियानवे हजार रानियाँ और छहखंड के साम्राज्यरूप चक्रवर्ती का वैभव प्राप्त कर लिया। चिरकाल तक सम्पूर्ण पृथ्वी के सुखों का अनुभव करके पुनः 'शीलगुप्त' मुनिराज के समीप निर्ग्रंथ मुनिदीक्षा ले ली। घोरातिघोर तपश्चरण करके अंत में समाधि से मरण कर अच्युत नामक सोलहवें स्वर्ग में इंद्र के पद को प्राप्त कर लिया। पूर्वकथित पूतिगंधा का जीव रोहिणी व्रत के प्रभाव से इन्हीं इंद्र की महादेवी हुआ था।

वहाँ की आयु पूर्ण कर अच्युत इंद्र इस हस्तिनापुर के नरेश वीतशोक महाराज का पुत्र हुआ जिसका नाम अशोक कुमार रखा गया। सखी! ये वे ही



अशोक कुमार आज अपने देश के महाराजा हैं और महारानी रोहिणी के साथ सुखपूर्वक राज्य संचालन कर रहे हैं। उनके विगतशोक, गतशोक, जिनशोक, विनष्टशोक, धनपाल, वसुपाल और गुणपाल ये सात पुत्र हुए हैं। उनके बाद वसुन्धरा, सुरकांता, लक्ष्मीमती और सुप्रभा ये चार कन्यायें हुई हैं। अनंतर लोकपाल नाम का सबसे छोटा और सबसे प्यारा महान् पुण्यशाली बालक हुआ है जो कि देवों द्वारा सन्मान को प्राप्त हो चुका है।

मुनिराज रूप्यकुम्भ ने बतलाया है कि हे राजन्! उस सम्पूर्ण वैभव को तुम एक 'रोहिणीव्रत' का ही फल समझो। कुछ दिन बाद तुम वासुपूज्य भगवान के समवसरण में जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण करोगे और गणधर पद को प्राप्त कर लोगे। पुनः उसी भव से मुक्तिकांता का वरण करोगे और महारानी रोहिणी भी आर्यिका पद ग्रहण कर अंत में समाधि से मरण कर स्त्रीपर्याय को छेदकर सोलहवें स्वर्ग में इंद्र पद को प्राप्त करेंगी और वहाँ से मुनि पद धारण कर निर्वाण को प्राप्त कर लेंगी। राजा ने अतीव प्रसन्नता और धर्मानुराग व्यक्त करते हुए मुनियों की बार-बार वंदना की और वे अपने महल में चले आये।

**ईहा**—सखी! इस शहर में हम सभी लोग बहुत ही पुण्यशाली हैं जो कि ऐसे महाराजाधिराज की छत्रछाया में रह रहे हैं। धन्य हैं ये महाराज, जो कुछ ही दिनों में भगवान के गणधर होकर अपनी देशना से असंख्य जीवों का उद्धार करने वाले हैं। सखी! मैंने सुना है कि गणधर देव को दीक्षा लेते ही अंतर्मुहूर्त में मनःपर्यय ज्ञान प्रकट हो जाता है और सभी ऋद्धियाँ भी उत्पन्न हो जाती हैं तथा वे उसी भव से मोक्ष प्राप्त करते हैं। क्या यह सच है ?

**स्मृति**—हाँ सखी। बिल्कुल सच है।

(बाजों की ध्वनि उठती है)

**ईहा**—सखी! आज शहर में विशेष ही सजावट है। सर्वत्र तोरण द्वार दिख रहे हैं। फूलों की मालायें लटक रही हैं। चंदन का छिड़काव किया गया है और ये बाजे भी बज रहे हैं। आज कोई उत्सव है क्या ?

**स्मृति**—हाँ सखी! आज अपने महाराजाधिराज का जन्मदिवस होने से सर्वत्र वर्धापन दिवस की खुशी में महोत्सव मनाया जा रहा है। चलो चलें, हम भी देखें क्या-क्या हो रहा है ?

(दोनों चली जाती हैं)

(महाराजा अशोक मंगल स्नान के बाद अपनी रोहिणी के साथ भद्रासन पर

बैठे हुए हैं। पास में राजकुमार बैठे हुए हैं। रानी ने अकस्मात् राजा के मस्तक पर एक सफेद केश देखा और बोली)

**रानी**—महाराज! देखिये यह यमराज का दूत आ गया।

**राजा**—(आश्चर्य से) कहाँ है प्रिये, कहाँ है ? मुझे भी दिखाओ।

**रानी**—(केश उखाड़कर राजा के कर-कमल में रखते हुए) यह लीजिए महाराज! आपके कर-कमल में उपस्थित है।

**राजा**—(सहसा विरक्तचित्त होकर) ओहो! मैंने अपना इतना अमूल्य मनुष्य जीवन यूँ ही बिता दिया। ओहो! यह संसार असार है, ये विशाल राज्यवैभव तृण पर पड़ी हुई बिन्दुओं के समान चंचल है, पुरुषों का जो यौवन चला जाता है वह वापस नहीं आता है। मिष्ट भोजनों से ललित किया गया यह शरीर भी क्षणभंगुर है। जब मैंने अर्ककीर्ति के भव में चक्रवर्ती के वैभव का उपभोग किया और अच्युत स्वर्ग में इंद्र के वैभव का अनुभव किया है तो भी तृप्ति नहीं हुई तो फिर इस क्षणिक तुच्छ राज्य से क्या तृप्ति होगी ?

उन सभी क्षणभंगुर वस्तुओं में एक आत्मा ही अविनाशी अजर-अमर है। वह ज्ञानधन है, परमानंद स्वरूप है। यद्यपि यह आठ कर्मों से सहित होने से अपने स्वभाव से च्युत हो रहा है फिर भी शुद्ध निश्चयनय से विचार करके देखा जाए तो यह अनंत गुणों का पुंज है, अनंत सौख्यस्वरूप है। यह चेतन आत्मा अपने पुरुषार्थ के बल से इन जड़ कर्मों को नष्ट करके अपने शुद्ध स्वभाव को प्राप्त कर सकता है। फिर क्या कारण है कि जो यह अनंत शक्तिशाली आत्मा इस मोह के चंगुल में फंसा हुआ है ? अब मुझे शीघ्र ही इस मोहराज से युद्ध करने के लिए सन्नद्ध होना है...।

बीच में ही रानी घबराती हुई बोलती है–

**रोहिणी**—(खिन्न होकर) प्राणनाथ! आप यह क्या कह रहे हैं ? आपके बिना हम लोग कैसे रह सकेंगे ?

**राजा**—देवि! आपने अच्युत स्वर्ग में मेरे साथ असंख्य वर्षों तक दिव्य सुखों का उपभोग किया है तब तृप्ति नहीं हुई तो यहाँ मनुष्य पर्याय में कुछ वर्षों की आयु में तृप्ति कैसे होगी ? इसलिए अब मोह छोड़ो और खुशी से मुझे दीक्षा की आज्ञा दे दो।

**रानी**—(उद्विग्न होकर) स्वामिन्! अभी आप कुछ दिन और राज्यभार सम्भालिए अनंतर...।



(बीच में ही बात काटकर)

**राजा**—बेटा! विगतशोक! मंत्रीगणों को और ज्योतिषी महाराज को बुलाओ।

**विगतशोक**—जो आज्ञा पिताजी!

(उठकर प्रतिहारी को बुलाने भेज देते हैं।)

**राजा**—अब तुम इस विशाल राज्य की धुरा को धारण करो और न्यायनीतिपूर्वक प्रजा का पालन करो।

**विगतशोक**—पिताजी! जब आप ही उसे छोड़ रहे हैं, तब मुझे क्यों संभला रहे हैं ? ऐसे क्षणिक राज्य को लेकर मैं क्यों अपने अमूल्य जीवन को व्यर्थ गवाऊँ ? मैं भी आपके साथ दीक्षा ग्रहण करूँगा।

**राजा**—अरे बेटा! अभी तुम्हारी उम्र ही क्या हुई है ? अभी तो कुछ दिन गार्हस्थ्यधर्म का पालन करते हुए सुखों का उपभोग करो, अनंतर दीक्षा लेकर आत्मा का कल्याण करना।

**विगतशोक**—पिताजी! यह यमराज किसी की छोटी या बड़ी उम्र को नहीं देखता है। इसलिए मैं तो आपके साथ ही जैनेश्वरी दीक्षा लेऊँगा।

(महाराज गतशोक आदि पुत्रों की तरफ दृष्टि डालते हैं कि सभी पुत्र भी उठकर खड़े हो जाते हैं।)

**सभी पुत्र**—(हाथ जोड़कर) पूज्य तात! हम लोग भी आपके साथ ही मोक्षमार्ग में लगेंगे! हमें यह तुच्छ क्षणभंगुर राज्य नहीं चाहिए। हम लोग भी शाश्वत मुक्तिसाम्राज्य के इच्छुक हैं।

(इसी बीच में मंत्रीगण और ज्योतिषी महाराज आ जाते हैं। यथोचित अभिवादन कर बैठ जाते हैं।)

**मंत्री**—(घबराते हुए हाथ जोड़कर) महाराजाधिराज! आपने आज के इस मंगल दिवस पर क्या सोच लिया ? ओह! हम लोगों के लिए आज बहुत ही अमंगल हो गया।

**राजा**—मंत्रिन्! तुम इतने विचारशील होकर कैसी बातें कर रहे हो ? देखो न, हमारे लिए तो आज सच में ही मंगलमय दिन हो रहा है। अथवा यों समझो कि आज ही मेरा जन्म सफल हुआ है जो कि मैं मोहराजा से युद्ध करके मुक्ति साम्राज्य को प्राप्त करके शाश्वत काल तक उसका उपभोग करूँगा।

**ज्योतिषी**—प्रभो! आज्ञा दीजिए।

**राजा**—हाँ, पंडितजी! प्रिय पुत्र लोकपाल के राज्याभिषेक का मुहूर्त निकालिये।

**ज्योतिषी—**(आश्चर्य से बड़े पुत्र की तरफ देखते हुए) कृपानाथ! विगतशोक राजकुमार के नाम से देखूँ या लोकपाल राजकुमार के नाम से!

**राजा—**ये सातों कुमार दीक्षा के लिए उत्सुक हैं अतः लोकपाल के नाम से ही देखिये।

**ज्योतिषी—**महाराज एक मुहूर्त के बाद आज ही बहुत उत्तम मुहूर्त है।

(पंडितजी को दक्षिणा देकर विदा करते हैं)

**राजा—**मंत्रिन्! राज्याभिषेक की तैयारी करो!

(कुछ क्षण बाद मंगल बाजे बजने लगते हैं। महाराज अपना मुकुट उतारकर लोकपाल के मस्तक पर रख देते हैं और चारों तरफ से जय-जयकार की ध्वनि होने लगती है। मध्य में वनपाल आकर छहों ऋतुओं के फल-फूल रखकर महाराज को प्रणाम कर निवेदन करता है)

**वनपाल—**कृपानाथ! अपने परम पुण्य से आज भगवान वासुपूज्य का समवसरण उत्तरदिशा के उद्यान में आया हुआ है।

**राजा—**(हर्ष से विभोर होकर) जय हो, जय हो, (सभी लोग आसन से उठकर उत्तर दिशा में सात पैंड चलकर नमस्कार करते हैं) नमोस्तु भगवन्! नमोस्तु-नमोस्तु!

(राजा वनपाल को अपने गले का रत्नहार दे देते हैं।)

**राजा—**मंत्रिन्! शीघ्र ही शहर में घोषणा करा दो कि सभी लोग प्रभु की वंदना के लिए चलेंगे।

(सब चले जाते हैं। महाराज सभी परिजन के साथ उद्यान में पहुंचते हैं। समवसरण को देखते ही गद्गद हो जाते हैं और पैदल ही चलकर समवसरण में पहुँचकर प्रभु का दर्शन-स्तवन करते हैं। सभी लोग भी दर्शन-स्तवन करते हैं।)

**राजा—**हे भगवन्! आज मेरा जीवन सफल हो गया। साक्षात् तीन लोक के नाथ का मैं दर्शन कर रहा हूँ। (हर्ष में विभोर होकर)

**—स्तुति पाठ—**

**धन्योऽस्मि पुण्यनिलयोऽस्मि निराकुलोऽस्मि।**
**शान्तोऽस्मि नष्टविपदस्मि विदस्मि देव!॥**
**श्रीमज्जिनेन्द्र! भवतोंऽघ्रियुगं शरण्यम्।**
**प्राप्तोऽस्मि चेदहमतीन्द्रियसौख्यकारि।।**
**प्रभु! आज नयनयुग सफल हुए, तव चरणाम्बुज अवलोकन से।**
**भववारिधि चुल्लू भर जल सम, मम त्रिभुवनतिलक! आज भासे।।**



**हे वासुपूज्य! भगवान आप, परमात्मप्रकाशक परमात्मन्।**
**निज आत्मप्रकाशन हेतू मैं, नित नमूँ तुम्हें हे सिद्धात्मन्।।1।।**

हे प्रभो! अब मुझे संसार समुद्र से तारने वाली ऐसी जैनेश्वरी दीक्षा देकर कृतार्थ कीजिए।

(राजा अपने मुकुट को उतार कर गले से रत्नहार आदि निकालते हैं।)

चारों तरफ से जय-जयकार होने लगता है। महाराज मुनि हो जाते हैं और तमाम लोग दीक्षा ग्रहण कर लेते हैं तथा रोहिणी देवी आर्यिका हो जाती हैं उनकी पुत्रवधुएँ और अन्य बहुत सी महिलाएं भी दीक्षा ले लेती हैं। अशोक महाराज कुछ क्षण में गणधर पद प्राप्त कर लेते हैं।

**सभी लोग—**श्री वासुपूज्य भगवान की जय, श्री गणधरदेव अशोक मुनिनाथ की जय, रोहिणीमती आर्यिका माता की जय, सभी मुनियों की जय, सभी आर्यिकाओं की जय, रोहिणी व्रत की जय।

(सभी मंगलगान करते हैं।)

*(पटाक्षेप)*

**।।इति शं भूयात्।।**

## भजन

***तर्ज—****भगवान मेरी नैय्या उस पार लगा देना...*

हे वासुपूज्य भगवन् हम शरण तेरी आए...।
उद्धार करो मेरा, कर्मों से हैं सताये...।। टेक.।।
यह मोह कर्म वैरी, बहु दुःख दे रहा है,
प्रभु भक्ति तेरी करके, कर्मों से छूट जायें...।। हे...।।1।।
स्वारथ के इस जगत् में, अपना हितू न कोई,
सच्चा हितू वही जो, शिवमार्ग को दिखाये।। हे...।।2।।
यह समय व्यर्थ बीता, रागी जनों के संग में,
प्रभू भूल रही भारी, वैराग्य को न पाये।। हे...।।3।।
जो पुण्य कुछ किया है, फल एक चाहुँ प्रभुवर,
बस शीघ्र आतमा की, चित् ज्योति को जगायें।। हे...।।4।।